योगविद्या

वर्ष 10 अंक 9
सितम्बर 2021
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2021

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर : श्री स्वामी शिवानंद सरस्वती की पूजा

अन्दर के रंगीन फोटो : शिवानंद आश्रम, ऋषिकेश में शिवानंद-पादुका-पूजन

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

राजयोग की कसौटी

मन को एक बिन्दु पर केन्द्रित करने के लिए निरन्तर प्रयास करते रहना चाहिए। यदि मन केन्द्र-बिन्दु से इधर-उधर विचलने लगे तो प्रयत्न कर, बार-बार उसे वापस लाने का अथक परिश्रम किया जाय। यही राजयोग की साधना है।

यदि राजयोग का निरन्तर-ध्यानपरायण विद्यार्थी दु:खित रहता है तो समझना चाहिए कि अवश्य उसके ध्यान में कोई त्रुटि होगी। यदि वह निराश और निर्बल है तो निश्चय ही कहीं पर गलती है, उसका सुधार करना चाहिए। ध्यान के अभ्यास से मनुष्य सशक्त, सुखी और स्वस्थ बनता है। याद रखो कि सदा मुस्कुराता हुआ चेहरा सच्ची आध्यात्मिकता और आन्तरिक दिव्य-जीवन का जीता-जागता प्रमाण है।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

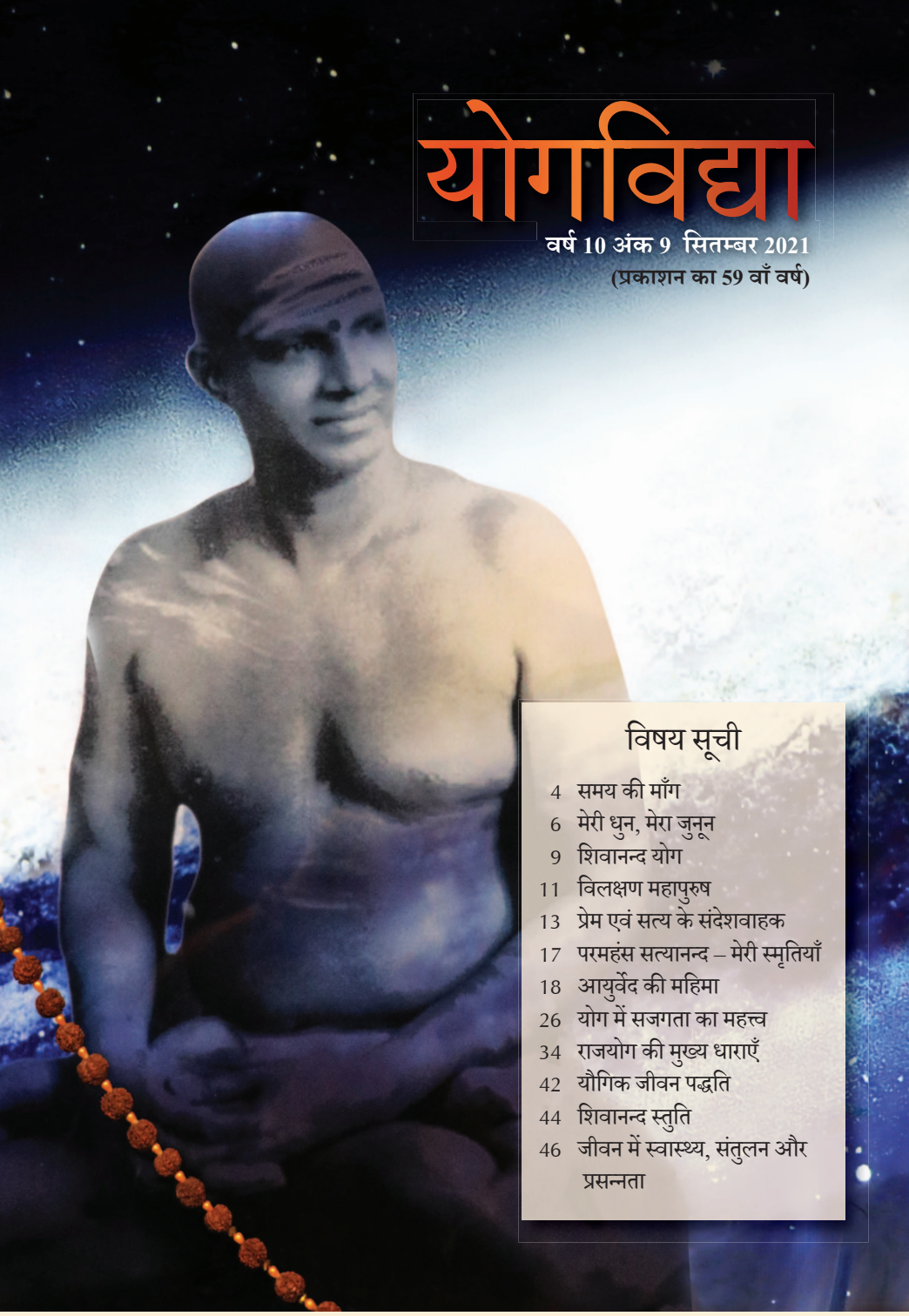

योगविद्या

वर्ष 10 अंक 9 सितम्बर 2021
(प्रकाशन का 59 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 समय की माँग
6 मेरी धुन, मेरा जुनून
9 शिवानन्द योग
11 विलक्षण महापुरुष
13 प्रेम एवं सत्य के संदेशवाहक
17 परमहंस सत्यानन्द – मेरी स्मृतियाँ
18 आयुर्वेद की महिमा
26 योग में सजगता का महत्त्व
34 राजयोग की मुख्य धाराएँ
42 यौगिक जीवन पद्धति
44 शिवानन्द स्तुति
46 जीवन में स्वास्थ्य, संतुलन और प्रसन्नता

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

समय की माँग

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

जब मनुष्य स्वार्थ, लोभ, काम, राग आदि में फँस जाता है, तब वह ईश्वर को भूल जाता है। वह सदा अपने शरीर, परिवार तथा सन्तान के चिन्तन में लगा रहता है। वह सदा अपने खान-पान, विश्राम तथा सुविधाओं के पीछे परेशान रहता हुआ संसार-सागर में निमग्न हो जाता है। आज मानव के जीवन में भौतिकवाद तथा पलायनवाद का ही साम्राज्य है। वह साधारण-सी बातों से उत्तेजित हो उठता है और झगड़ने लगता है। सर्वत्र अशान्ति, दु:ख, शोक तथा विद्रोह छाया हुआ है। आज सारा जगत् ही भौतिकवाद के पंजे में आ गया है। नये प्रकार के बमों के आविष्कार से सर्वत्र आतंक छाया हुआ है। सद्ग्रन्थों तथा ऋषियों के सदुपदेशों में लोगों की श्रद्धा नहीं रही है। कुशिक्षा तथा कुप्रभाव के कारण लोग अधार्मिक बन गए हैं।

मानव-जाति के अधिकांश दु:ख उसके ही कर्मों के कारण हैं। मनुष्य को अपनी भूलों के प्रति अवगत कराना तथा उन्हें सुधारने के लिए बाध्य करना आवश्यक है, जिससे वह अपने जीवन को उन्नत लक्ष्यों के लिए उत्साहपूर्वक लगा सके। यही इस युग की तात्कालिक अपेक्षा अनुभव हुई। ऐसे पथ-प्रदर्शन के लिए

लाखों मनुष्य उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह मूक प्रार्थना सुनी गयी। मैंने दिव्य जीवन संघ के जन्म को देखा, जिसका कार्य है मनुष्य को पाशविक एवं आसुरी शक्तियों से छुड़ाकर उसके इहलौकिक जीवन को दिव्य बनाना।

ठीक इस संकटपूर्ण समय में ही मैंने दिव्य जीवन संघ की स्थापना की। अब लोग इसे जगत् के लिए वरदान स्वरूप मानते हैं। विश्व के समस्त धर्मों तथा सारे सन्तों एवं पैगम्बरों के उपदेशों का सार ही इसका आधार है। इसके सिद्धान्त सार्वभौमिक, उदार, सर्वग्राही एवं विज्ञान तथा बुद्धि के अनुकूल हैं। इसने बाह्य नाम-रूपों के पीछे छिपे हुए आनन्दमय दिव्यत्व के साक्षात्कार से मनुष्य को इस सांसारिक जीवन के दु:खों से ऊपर उठाने का कार्य अपने हाथ में लिया है। अच्छे विचार सभी भले मनुष्यों में व्याप्त होते तथा अपना प्रभाव डालते हैं। दिव्य जीवन संघ द्वारा उत्पन्न विचार-धाराओं का प्रभाव यूरोप तथा अमेरिका तक के लोगों पर पड़ा है। फलस्वरूप अब अखिल विश्व में शान्ति की पिपासा बढ़ चली है।

तर्क या विवाद के द्वारा सच्चा धर्म नहीं सिखाया जा सकता। केवल उपदेशों या नीति-वाक्यों के द्वारा आप किसी व्यक्ति को धार्मिक नहीं बना सकते। यदि आप उन्नति करना तथा जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं, तो धर्म का अभ्यास और इसके उपदेशों का पालन कीजिए। चाहे आपका धर्म कोई भी हो, कोई भी आपका प्रणेता हो, कोई भी आपका देश या आपकी भाषा हो, कैसी भी आपकी अवस्था हो, चाहे आप पुरुष हों या स्त्री, यदि आपको अहंकार को कुचलने, मन के निम्न स्वभाव को नष्ट करने तथा शरीर, मन तथा इन्द्रियों पर आधिपत्य जमाने की विधि ज्ञात हो, तो आप शीघ्र उन्नति कर सकते हैं। वास्तविक शान्ति तथा नित्य-सुख के लिए मैंने यही मार्ग ढूँढ निकाला है। अत: मैं गरमागरम बहस तथा विवाद के द्वारा लोगों को विश्वास दिलाने का प्रयत्न नहीं करता।

वास्तविक धर्म तो हृदय का धर्म है। सर्वप्रथम हृदय को शुद्ध बनाना होगा। सत्य तथा प्रेम ही वास्तविक धर्म के आधार-स्तम्भ हैं। निम्न प्रकृति पर विजय, मन का निग्रह, सद्गुणों का उपार्जन, मानवता की सेवा, सद्भावना, पारस्परिक बन्धुत्व-भाव – ये ही अच्छे धर्म के आधार हैं। मैं साधकों का कौतूहल दूर करने के लिए सद्ग्रंथों से प्रामाणिक कथनों की खोज में समय नष्ट नहीं करना चाहता। मैं व्यावहारिक जीवन व्यतीत करता हूँ तथा साधकों के लिए आदर्श प्रस्तुत करने का प्रयत्न करता हूँ, जिससे वे भी अपने जीवन को तदनुकूल ढाल सकें।

मेरी धुन, मेरा जुनून

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

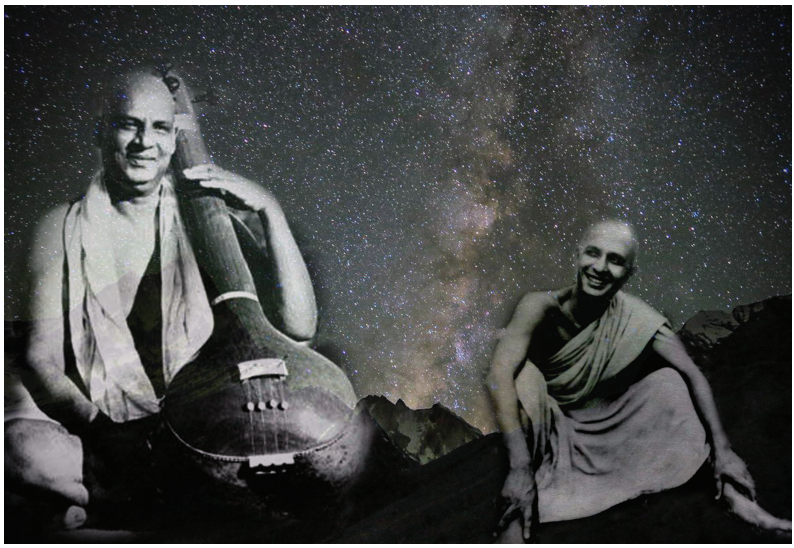

स्वामी शिवानन्द जी के साथ बारह साल रहने के दौरान कई बार लोग मेरे पास आकर पूछते थे, 'यह स्वामी तुम्हें क्या शिक्षा देते हैं?' सभी लोगों को पता था कि मैं संस्कृत का विद्वान् और प्रतिभाशाली व्यक्ति था। वे मेरे सामने यही प्रश्न रखते थे, 'आपके गुरु आपको क्या सिखाते हैं?' मैंने कहा, 'कुछ नहीं।' 'वे आपको हठयोग नहीं सिखलाते?' मैं कहता, 'नहीं, मैं उनके पत्र टाईप करता हूँ।' 'क्या वे आप पर शक्तिपात का प्रयोग करते हैं?' मेरा जवाब रहता, 'शक्तिपात का मुझे कुछ अता-पता नहीं।' कोई मुझसे पूछता, 'क्या उन्होंने आपको कुछ सिद्धि दी है?' मैं कहता, 'बिल्कुल नहीं।'

एक बार एक बहुत प्रसिद्ध और शक्तिशाली राजनेता मुझसे मिले। उन्होंने मुझसे कहा, 'देखो नौजवान! तुम यहाँ अपना समय व्यर्थ गंवा रहे हो। तुम इतने प्रतिभाशाली व्यक्ति हो, इतने बढ़िया वक्ता हो। तुम सारे देश को प्रभावित कर सकते हो। मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें बताऊँगा क्या करना चाहिए।' मैं चुप रहा, और मन-ही-मन सोचने लगा, 'यह एक परीक्षा है जो मेरे गुरुजी ने मेरे सामने रख दी है।' यह एक बहुत बड़ा प्रलोभन था, क्योंकि वह मुझे एक

राजनीतिक पार्टी का अध्यक्ष बनाना चाहते थे, हजारों प्रभावशाली व्यक्तियों का नेता। लेकिन मैंने वह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। मुझे पूरा विश्वास था कि स्वामीजी ने मुझसे जो कहा था वह जरूर सत्य साबित होगा। उन्होंने कहा था, 'कठोर परिश्रम करते हुए स्वयं को शुद्ध करो। दिव्य प्रकाश तुम्हारे भीतर है।'

स्वामी शिवानन्द जी ऋषिकेश में भगवान विश्वनाथ का एक मंदिर बनाना चाहते थे। अब हम पानी कहाँ से लाते? भवन निर्माण में बहुत पानी की आवश्यकता होती है और गंगा नदी आश्रम से बहुत नीचे है। उन दिनों ऋषिकेश में न तो बिजली थी और न ही कोई जेनरेटर। मैंने बिजली और जेनरेटर पहली बार 1950 में ही देखा। खैर हमलोग ऊपर तपोवन गाँव तक गए, जहाँ एक झरना था। पन्द्रह दिनों में हमने पहाड़ी में एक नाली खोदी और चालीस बटा बारह फीट का एक बड़ा हौज बना डाला!

उन दिनों मैं इतना दुबला-पतला था कि लोग मुझे चिढ़ाते थे। बाहर से आये लोग कहते थे, यह किस तरह का ब्रह्मचारी है? मेरे गाल सूखे और पिचके हुए थे, मेरे शरीर की एक-एक हड्डी गिनी जा सकती थी। मेरे चेहरे में कोई आकर्षण नहीं था। मेरे शरीर पर माँस बिल्कुल नहीं था, पर ऊर्जा इतनी थी कि मैं दिन में पाँच बार गंगा आर-पार कर सकता था। अगर आप मुझे पेड़ पर चढ़ने को कहते तो मैं बंदर की तरह फुर्ती से चढ़ सकता था। इस कारण आश्रम में पानी की टंकियाँ भरना मेरी जिम्मेदारी थी, गंगा जी से पचास बाल्टियाँ रोज। शिवजी की पूजा के लिए जंगल से बेल पत्र लाना भी मेरा ही काम था।

कभी-कभी मुझे पुस्तकालय की सफाई करने को कहा जाता और धूल झाड़ते समय मुझे वहाँ ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद दिखते। यह एक बहुत बड़ा प्रलोभन था। उपनिषद और अन्य आध्यात्मिक ग्रंथ भी मुझे प्रलोभित करते थे। मैंने स्वामीजी से कहा, 'यहाँ इतनी सारी पुस्तकें हैं। क्या मैं कुछ पढ़ने के लिए ले सकता हूँ?' उन्होंने उत्तर दिया, 'सत्यानन्द, तुम इंजेक्शन की बात कर रहे हो, तुम्हें तो शिक्षण की बात करनी चाहिए। जब ज्ञान बाहर से आता है तो वह इंजेक्शन लेना हुआ। जब आंतरिक ज्ञान बाहर प्रकट होता है, तब उसे शिक्षा या विद्या कहते हैं। सारा ज्ञान तुम्हारे अन्दर विद्यमान है। चारों वेदों का ज्ञान तुम्हारे भीतर है। मनुष्य सर्वज्ञानसम्पन्न है। तुम्हारी आत्मा सर्वज्ञ है।' उनका कहना था कि हर जीव, हर प्राणी मूलत: ईश्वर स्वरूप है। उसके अन्दर वह बीज व्याप्त है जिसे आत्मा या परमात्मा कहा जाता है।

ज्ञान हमारे अन्दर है, फिर वेदों को पढ़ने से आप क्या हासिल करेंगे? मैं बारह वर्ष सिर्फ परिश्रम ही करता रहा और फिर मुझे योग सिखाने को कहा गया। आप मानें या न मानें, मैंने कभी योग पर कोई पुस्तक नहीं पढ़ी। मैंने योग पर कई किताबें लिखी जरूर हैं, लेकिन पढ़ी कोई नहीं। कुछ किताबों, जैसे याज्ञवल्क्य संहिता, गोरक्ष संहिता, घेरण्ड संहिता और स्वात्माराम की हठ योग प्रदीपिका के सिर्फ पन्ने पलटे हैं। सब को देखा जरूर है, पर किसी को पढ़ा नहीं, क्योंकि स्वामी शिवानन्द जी ने मुझे आश्वस्त कर दिया था कि सारा ज्ञान मेरे भीतर ही है।

सच कहूँ तो मैं जो कुछ भी सिखाता हूँ, जितनी भी किताबें मैंने लिखी हैं, हठयोग पर जो भी बातें करता हूँ, मुझे मालूम नहीं यह सब कहाँ से आया। मैंने योग पर किताबें नहीं पढ़ी हैं, लेकिन अब योग का कोई भी विषय मेरे मन में एकदम स्पष्ट हो जाता है। मैं अब हठयोग, तंत्र या कुण्डलिनी पर जो कुछ भी कहता हूँ, पूर्ण अधिकार के साथ कहता हूँ। देखा जाए तो ज्ञान कहीं बाहर से नहीं आता। जो भी ज्ञान प्रकट होता है वह हमारे अन्दर पहले से ही विद्यमान है, केवल अभिव्यक्ति की देर है। जो मेरे अन्दर है, वह आपके अन्दर भी है। अंतर केवल इतना है कि मैंने निष्काम, निस्स्वार्थ गुरु-सेवा को अपने जीवन का मूलमंत्र बना लिया था। मुझ पर यही धुन हरदम सवार रहती थी, यही मेरा जुनून था, यही मेरा आनन्द और खुशी थी।

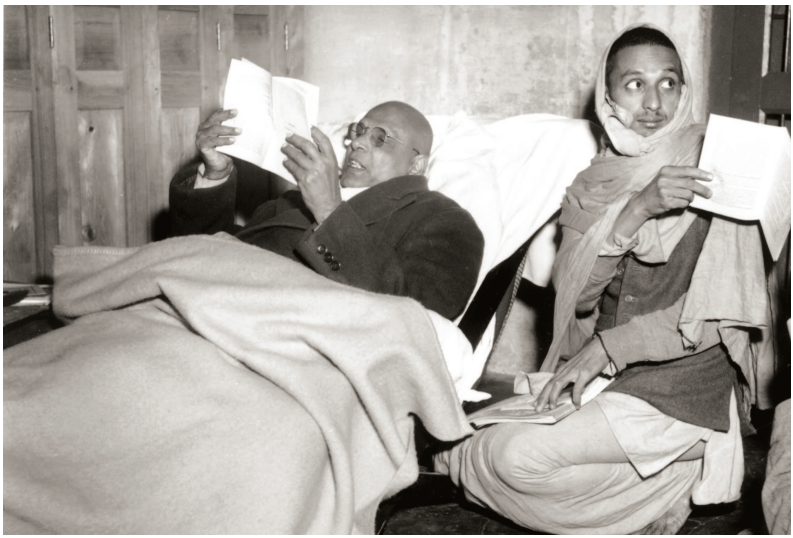

शिवानन्द योग

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हमारे परमगुरु स्वामी शिवानन्द जी एक ऐसी दिव्य विभूति थे जो बहुत ही सरल स्वभाव के थे, लेकिन जिनमें भक्ति, श्रद्धा और सेवा कूट-कूट करके भरी हुई थी। सेवा से वे कभी घबराये नहीं, बल्कि सभी को उत्तम से उत्तम सेवा करने के लिये प्रेरित किया। उनका हमेशा यही कहना रहा कि जीव की सेवा ही ईश्वर की वास्तविक आराधना है। वे कहते थे, तुम ध्यान लगाते हो, मोक्ष और समाधि की कामना करते हो, वह तो तुम अपने स्वार्थ के लिये कर रहे हो। जब तुम नि:स्वार्थ भाव से साधना करोगे तो तुम में कोई कामना या इच्छा शेष नहीं रहेगी, और जो इच्छा शेष रहेगी वह मात्र दूसरों की सेवा की ही होगी, स्वयं की समाधि की नहीं।

जैसे महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग का प्रतिपादन किया था, उसी तरह स्वामी शिवानन्द जी का भी अष्टांग योग हमारे सामने है। देखिये, मैं आपको एक बात स्पष्ट कर देता हूँ, भले ही महर्षि पतंजलि का योग विद्या के विकास में अनुपम योगदान रहा है, लेकिन योग विद्या उनके पूर्व भी थी। अनेक मनीषियों ने इस योग विद्या का संरक्षण और संवर्धन किया था, उसके बाद महर्षि पतंजलि ने आकर राजयोग पर अपने सूत्रों को लिखा – हठयोग पर नहीं, क्रियायोग पर नहीं, कुण्डलिनी योग पर नहीं, ज्ञानयोग पर नहीं, भक्तियोग पर नहीं, केवल राजयोग पर। उनका यही एक विषय रहा और इसमें उन्होंने राजयोग के आठ चरण बतलाये – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। राजयोग के अन्तर्गत ये आठ अंग साधनात्मक हैं। उनकी साधना से हम अपने जीवन को सुन्दर बना सकते हैं, जीवन में एक सकारात्मक, रचनात्मक परिवर्तन ला सकते हैं। यम से लेकर समाधि तक यह जितनी भी साधना है, इसे हम अपने सुख के लिये, अपनी शान्ति के लिये, अपने उत्थान के लिये करते हैं। लेकिन समाधि के पश्चात् जब हम ईश्वर के सामने खड़े होते हैं तो ईश्वर कहते हैं कि बेटा, तुमने अपने स्वार्थ के लिये सब कुछ प्रयास किया है, समाधि तो तुमको मिली है, पर तुम्हारी समाधि से दूसरों का कोई फायदा नहीं हुआ। वापस जाओ और स्वामी शिवानन्द जी का जो अष्टांग योग है उसका पालन करो और उसके बाद मेरे पास आना।

स्वामी शिवानन्द जी का अष्टांग योग बहुत व्यावहारिक है और इसकी शुरुआत महर्षि पतंजलि के अष्टांग योग के बाद होती है। जब मनुष्य अपनी सीमाओं को तोड़कर, अपने स्वार्थ को तोड़कर परमात्म भाव में स्थित होता है तब स्वामी शिवानन्द जी का योग आरम्भ होता है। वह कौन-सा योग है? उसका प्रथम चरण है सेवा, द्वितीय चरण है प्रेम, तृतीय चरण है दान, चौथा चरण है आन्तरिक शुद्धता, पवित्रता, निर्मलता, पाँचवा चरण है अच्छा बनना – अपने आपको सद्गुणों से युक्त करना, छठवाँ चरण है अच्छा करना ताकि दूसरों का हित हो, दूसरों का उत्थान हो, सातवाँ चरण है ध्यान करना और आठवाँ चरण है आत्म-साक्षात्कार को प्राप्त करना।

महर्षि पतंजलि ने सातवें और आठवें चरण में जिस ध्यान और समाधि की चर्चा की, वह अपने से जुड़कर चर्चा की, अपने भीतर झांकने के लिये कहा, और हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी जब सातवें और आठवें चरण में ध्यान और आत्म-साक्षात्कार की बात कहते हैं, तो वह ध्यान और साक्षात्कार होना है दूसरों में। तब जाकर मनुष्य अपने आपको आध्यात्मिक जीवन में स्थापित करता है। साधना के दौरान हमारे जीवन में जो उपलब्धि हुई उसकी अभिव्यक्ति स्वामी शिवानन्द जी की सेवा, प्रेम आदि इन्हीं शिक्षाओं के द्वारा होती है।

स्वामी शिवानन्द जी ने अपने अष्टांग योग के माध्यम से दिव्य जीवन जीने की जो कला बतलाई है उसी शिक्षा को स्वामी सत्यानन्द जी ने विश्व में प्रसारित किया। आज, 8 सितम्बर को हम उन्हीं युगद्रष्टा मनीषी का प्रादुर्भाव दिवस मना रहे हैं जो आने वाले दिनों में भी हम सबको दिव्य जीवन अपनाने के लिये प्रेरित करते रहेंगे।

– 8 सितम्बर 2018, पादुका दर्शन

विलक्षण महापुरुष

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

इतिहास के हर निर्णायक मोड़ पर मानवता को दु:ख-निवृत्ति का मार्ग दिखाने महापुरुष अवतरित हुए हैं। ऐसे ही एक महापुरुष थे हमारे परमगुरु, श्री स्वामी शिवानन्द जी। उनका जन्म एक पूर्वनिर्धारित देवकार्य को सम्पन्न करने के लिए हुआ था। वे विशुद्ध प्रेम और भक्ति की साक्षात् प्रतिमूर्ति थे। आने वाले दशकों में भक्ति और प्रेम नवजीवन प्राप्त करेंगे, सब जगह फलेंगे-फूलेंगे। अपने सपनों और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए बड़ी संख्या में लोग भक्ति मार्ग पर अग्रसर होंगे।

रिखियापीठ में दिये एक यादगार सत्संग में श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने कहा भी था, 'इक्कीसवीं सदी की पहचान भक्ति होगी। योग नेपथ्य में चला

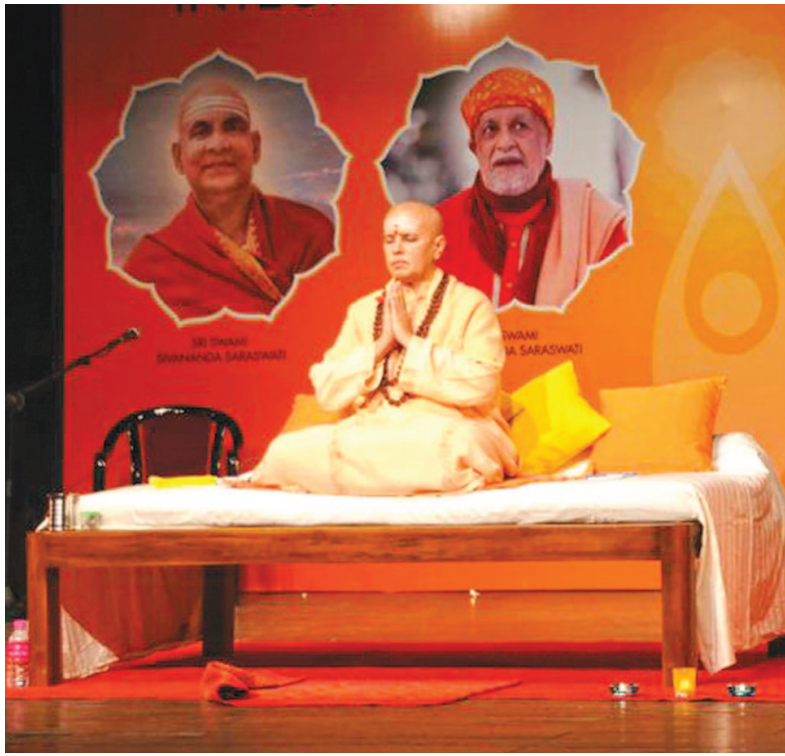

जाएगा और भक्ति की भूमिका प्रधान होगी, मात्र एक मान्यता के रूप में नहीं, बल्कि एक विज्ञान के रूप में। यह अवश्यम्भावी है। भक्ति इस शताब्दी का राजमार्ग है, और उस मार्ग का गन्तव्य है ईश्वर।'

इसके लिये हमलोगों को परमगुरु स्वामी शिवानन्द जी की सेवा, प्रेम और दान की उन शिक्षाओं को आत्मसात् करना चाहिये, जिन्हें स्वामी सत्यानन्द जी ने रिखियापीठ में जीवंत रूप दिया है। स्वामी सत्यानन्द जी कहा करते थे, 'स्वामी शिवानन्द जी के बारे में सोचना ही अति उत्तम योग है।' इस दृष्टि से देखें तो श्री स्वामीजी इन शिक्षाओं के माध्यम से हमलोगों को अपने गुरु के महान् व्यक्तित्व से परिचित करा रहे हैं और उनके साथ एक गहरा सम्बन्ध जोड़ने का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। ये शिक्षाएँ वस्तुत: इक्कीसवीं सदी की मानवता की सबसे कीमती धरोहर हैं। इन्हीं के बल पर रिखियापीठ की गतिविधियाँ दिन दूनी, रात चौगुनी बढ़ रही हैं। स्वामी शिवानन्द जी कहते थे कि मानव सेवा ही माधव सेवा है; दूसरों की सेवा, सहायता और कल्याण में ही हमारा अपना आध्यात्मिक उत्कर्ष निहित है।

आज हम एक ऐतिहासिक दौर से गुज़र रहे हैं। चारों ओर की घटनाएँ एक व्यापक परिवर्तन का संकेत दे रही हैं। मानव चेतना घृणा से प्रेम की ओर, स्वार्थ से नि:स्वार्थ भाव की ओर अग्रसर हो रही है। स्वामी सत्यानन्द जी ने भक्ति-युग के आगमन की जो भविष्यवाणी की है, उसके परिप्रेक्ष्य में इन संकेतों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मानव जाति आने वाले दिनों में प्रेम, सेवा, करुणा, समर्पण, शांति और भाईचारे की भावना को अधिकाधिक महत्त्व देने लगेगी। तभी भावी पीढ़ियों को एक बेहतर दुनिया मिल सकेगी।

प्रेमविहीन जीवन एकदम शून्य एवं निरर्थक होता है। प्रेम के बिना मनुष्य अपना जीवन व्यर्थ गँवाता है। श्वास की तरह प्रेम जीवन के लिए अत्यावश्यक है। प्रेम जीवन का सार तत्त्व है। प्रेम बाँटोगे तो प्रेम मिलेगा। इसलिए नियमित जप, सत्संग, कीर्तन, सेवा तथा ध्यान के द्वारा अपने भीतर प्रेम की लहलहाती फसल काटिये।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

प्रेम एवं सत्य के संदेशवाहक

स्वामी सत्यव्रतानन्द सरस्वती

मनुष्य महान् से भी महान् बन सकता है, यदि उसकी आसक्ति क्षणभंगुर वस्तुओं के साथ न हो और यदि वह उस महिमा की प्राप्ति के लिए अपने को तैयार कर ले जहाँ सूर्य तमिस्र में निमग्न हो जाता है, चन्द्रमा रुधिर में निमग्न हो जाता है तथा बादल उसकी उपस्थिति के आनन्द में रुदन-वर्षा करते हैं।

वेद उदधि बिन गुरु लखे, लागे लवण समान।
बादर गुरुमुख द्वारा बहे, अमृत ते अधिकान॥

ईश्वर ने अपने ज्ञान और करुणा से अनुप्रेरित हो, प्रेम एवं सत्य के संदेश वाहक, श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती को भेजा। उन्होंने दिव्य जीवन के कार्य की पूर्ति के लिए ही जन्म धारण किया तथा उसके लिए ही अपना उत्सर्ग किया। मुझे उनको देखने-समझने व चरणों के निकट बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

वे संसार के समक्ष उन उपदेशों की घोषणा करते जिनसे अविद्याग्रस्त मनुष्य उन्हें सुनकर लाभ उठावें – सेवा, प्रेम, दान, शुद्धि, मनन, ध्यान, साक्षात्कार। वे सब के समक्ष अपना उदाहरण रखते थे, तथा सबका नेतृत्व करते हुए उन्हें पूर्णता के पथ का प्रदर्शन करते थे, जिससे वे उस परम महिमा की प्राप्ति में समर्थ हो सकें।

स्वामी शिवानन्द जी समस्त संसार के मित्र तथा गुरु थे। उनके उपदेश हैं – सद्गुणों का उपार्जन करो, दुर्गुणों को दूर करो, अहंकार को विनष्ट करो। सभी भूतों में अंतर्यामी को देखो। अपने लिए प्रदीप बनो तथा संसार के लिए ज्योति। स्वयं प्रबुद्ध बनो और समस्त संसार को उद्बुद्ध करो। इस भौतिकवादी, तमसाच्छन्न संसार में अध्यात्म तथा ईश्वरत्व की ज्योति को प्रदीप्त बनाए रखो।

स्वामी शिवानन्द जी ने तपस्या के सामान्य रूपों का अभ्यास तो किया ही जैसे गंगा जी के बर्फीले जल में खड़े रहकर जप करना, जमीन पर बिना बिस्तर के सोना, बहुत दिनों तक उपवास करना, हिमालय से मानसरोवर तक की पैदल यात्रा करना, पर साथ ही स्वामीजी भगवद् गीता में वर्णित तपस्या-त्रय के सजीव उदाहरण हैं। देव-द्विज-गुरु-प्राज्ञ-पूजनम् – इसका तो वे अक्षरश: पालन करते थे। इसके साथ-साथ गीता में वर्णित शारीरिक-तपस्या – शौच,

आर्जव, ब्रह्मचर्य तथा अहिंसा तो उनके लिए स्वाभाविक ही थी। जिन लोगों ने शिवानन्द जी से भेंट की है, वे जानते हैं कि उनके शब्द अमृत एवं मधु से भरपूर थे। उनके अधरों से कठोर शब्द निकल ही नहीं सकते थे। जो शब्द सत्यम्, प्रियम् तथा हितम् के त्रिलय जांच में खरा नहीं उतरता, उस शब्द को वे बोलते ही नहीं। वे उस शब्द को भी नहीं बोलते, जो सत्य तो है परन्तु उसके कहने से आघात पहुँचने की आशंका है। उसे ईश्वर के ऊपर छोड़ देंगे। स्वामीजी का अपनी वाणी पर पूर्णत: नियंत्रण था, और यही उनकी वाणी का तपस् था। मन:प्रसाद, सौम्यत्व, मौन, आत्मविनिग्रह और भाव संशुद्धि स्वामीजी में अपनी परिपूर्णता में पाए जाते हैं। सदा सौम्य, शान्त तथा मुदित रहकर वे अपने चतुर्दिक लोगों में शान्ति एवं आनन्द को विकीर्ण करते रहते। उनका प्रत्येक शब्द नपा-तुला तथा श्रोता की आत्मा को प्रबुद्ध करने योग्य रहता। उनके व्यक्तित्व का प्रत्येक कण उनकी आज्ञा के अनुसार ही चलता।

अपमान सहो, नुकसान सहो – यही सबसे बड़ी साधना है, स्वामीजी अपनी कोटि के सम्भवत: एक ही संत हैं जो इसका अक्षरश: पालन करते। जब आप इसका अभ्यास प्रारम्भ करेंगे तब पता चलेगा कि इसमें कितनी कठिनाई है। अपमान सहन करने से मनुष्य के भीतर की ज्वाला क्रोध के रूप में अभिव्यक्त न होकर उसके अन्दर के सारे पापों को जला डालती है। विरोधी शिष्य की कठोर बातों को सुनकर भी वे हँस देते तथा उसे आशीर्वाद देते थे।

स्वामी शिवानन्द जी रचनात्मक तथा सक्रिय प्रार्थना के हिमायती थे – वह प्रार्थना जो हृदय के अन्तरतम से नि:सृत होकर मनुष्य के कण-कण में उसी

प्रकार परिव्याप्त होती है, जिस प्रकार रुधिर हृदय से संचरित होकर समस्त शरीर में परिव्याप्त होता है तथा उसका पोषण करता है। सत्संग के समय हम उन्हें ऐसा कहते सुनते थे, 'अमुक व्यक्ति आज चल बसा, दिवंगतात्मा की शान्ति के लिए हम सब प्रार्थना करें। अमुक व्यक्ति का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है, अत: हम सब उनके स्वास्थ्य की पुनर्प्राप्ति तथा दीर्घायु के लिए प्रार्थना करें।' इसके पश्चात वे स्वयं कीर्तन करते थे और उपस्थित जन उनका अनुगमन करते थे। अंत में 2 मिनट मौन होकर ध्यान करते थे। यथार्थत: ऐसी प्रार्थनाओं ने अनेक आश्चर्य संघटित किए हैं।

स्वामी शिवानन्द जी कहते थे कि हम निष्काम भाव से सब के लिए प्रार्थना करें। उदाहरणार्थ, जन्म-दिवस के दिन किसी के आश्रम दर्शनार्थ आने पर उनके स्वास्थ्य एवं दीर्घायु के लिए प्रार्थना करते समय स्वामी जी गाते थे – 'भगवान सम्पन्न करें श्री .... जी तथा उनके परिवार को, और समस्त संसार को स्वास्थ्य, दीर्घायु, शान्ति, आनन्द और अमरत्व से।' फिर वे तीन जय ध्वनि करवाते थे 'श्री .... जी तथा उनका परिवार चिरंजीवी हो।' चौथी ध्वनि में कहते थे, 'समस्त मानव जाति चिरंजीवी हो।'

स्वामी शिवानन्द जी की प्रार्थना मनुष्यों तक ही सीमित नहीं थी। किसी घायल बन्दर या कुत्ते के लिए भी स्वामीजी उसी प्रकार महामृत्युंजय मंत्र का जप करते थे जिस प्रकार किसी भी रुग्ण व्यक्ति के प्रति किया जाता है। रास्ते में पड़ी हुई मृतक छिपकली की जीवात्मा के लिए भी वे महामंत्र कीर्तन कर डालते थे। स्वामीजी के लिए सारे प्राणी एक समान थे, और उनकी प्रार्थना सार्वभौमिक थी। प्रार्थना ही जीवन तथा साधना में सफलता की कुंजी है। ईश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वज्ञता एवं सर्वशक्तिमत्ता की स्वीकृति तथा जीवात्मा की ससीमता व दुर्बलता का मान ही प्रार्थना है। अत: प्रार्थना ईश्वरार्पण तथा भक्ति साधना का आवश्यक अंग है। स्वामीजी के सत्संग भवन में देवी-देवताओं के चित्र हैं। वे अपने दैनिक कार्यक्रमों में उनकी सत्ता का अनुभव करते। ज्योंही वे कार्यालय में प्रवेश करते, त्योंही उनकी दृष्टि उन चित्रों की ओर जाती, मानो कह रहे हों – मैं यहाँ हूँ, आप की ही इच्छा के पूर्त्यर्थ आपका सहयोगी, आपका निमित्त स्वरूप।

कार्यक्रम शुरू करने से पहले स्वामीजी कुछ क्षण के लिए मूक प्रार्थना अर्पित करते। एक काम समाप्त करने के बाद दूसरा काम शुरू करने के पहले, स्वामीजी अपनी कुर्सी पर पीछे टिककर एक आँख को बंद करते हुए दूसरी से

प्रभु के किसी चित्र की ओर दृष्टि-निक्षेप कर लेते। वह क्षणिक काल ही उनके लिए अमरत्व, अनन्तता, परमशान्ति तथा परमानन्द था। इस प्रकार परमात्मा का योग सतत् बना रहता। स्वामी शिवानन्द जी के लिए इन आलम्बनों की आवश्यकता ही नहीं थी। वे तो सदा ब्राह्मी चेतना में संस्थित रहते थे, परन्तु वे ऐसा करते थे हम लोगों के लिए उदाहरण के स्थापनार्थ।

गंगा के किनारे निर्जन कुटी में बैठकर इस महर्षि ने समस्त संसार में सुख का संचार किया है। देश-विदेश में सहस्रों लोगों ने उनके संदेशों को पढ़ा है, उनकी पुस्तकों का अध्ययन किया है। उनकी पुस्तकों का कई भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। उनके संदेश का प्रभाव आज पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों के रूप में समस्त संसार में फैल गया है। 300 पुस्तकों के वे विख्यात लेखक हैं। 1953 में स्वामी शिवानन्द जी ने ऋषिकेश में विश्वधर्म सम्मेलन बुलाया, जिसमें विश्व के सारे देशों से प्रतिनिधि आये थे। अनेक धर्मों के नेताओं ने स्वामीजी के नेतृत्व में सारे धर्मों की एकता की घोषणा की। यह ऐतिहासिक घटना थी।

मैं गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के पास विश्व-धर्म-सम्मेलन के समय अनायास ही पहुँचा था। उनका साहित्य पढ़कर ज्ञात हुआ कि मानव अगर गुरुदर्शन को उत्सुक होता है, तो समय पर योग्य गुरु को पा ही लेता है। उनसे पत्र द्वारा आशीर्वाद प्राप्त किया। ध्रुव का ज्ञान हो चुका है, तिमिर का भान हो चुका है। और निशा का अवसान भी हो चुका है, क्योंकि उनके आशीर्वाद का प्रतीक, पथ प्रदर्शक ध्रुव हमें 'स्वामी सत्यम्' के रूप में प्राप्त हो चुका है, जिनके चरणों के आलोक में हमने सब कुछ पाया है।

परमहंस सत्यानन्द – मेरी स्मृतियाँ

स्वामी धर्मशक्ति सरस्वती

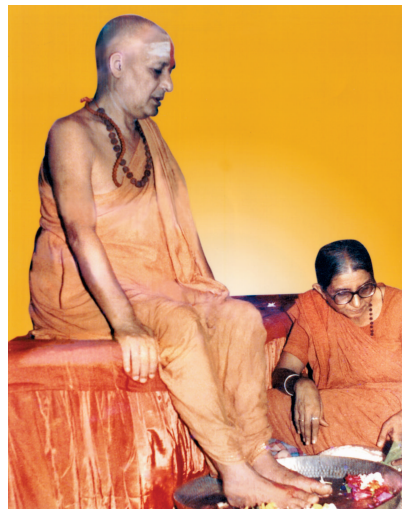

आगे चलकर स्वामीजी के प्रोग्राम बनाते रहे, काम चलता रहा, वे आते-जाते रहे। हम लोग कई सालों से 'योग वेदान्त' पढ़ रहे थे और उसमें गुरु पूर्णिमा के बारे में भी बहुत कुछ पढ़ने को मिला था। 1956 की गुरु पूर्णिमा में हमने भी उसी तरह से योजना बनायी और उनकी पूजा की तैयारी की।

उन्होंने कहा, 'देखो, पूजा गुरु की होती है, मैं तो मात्र शिष्य हूँ।' हमने कहा, 'नहीं, आप गुरु के प्रतिनिधि हैं। हम लोग आप ही की पूजा करेंगे।' उन्होंने जवाब में कहा, 'मैं न तो कभी गुरु बनूँगा और न ही आश्रम बनाऊँगा। इसलिए मेरी पूजा मत करो।' पर हम लोगों ने ज़िद की, 'नहीं, हम तो आपकी पूजा करेंगे।' खैर, अन्त में पूजा हुई, हम लोगों ने उनको गुरु माना, हालाँकि उन्होंने इस पद को कभी स्वीकार नहीं किया। इस तरह समय बीतता गया और प्राय: हर गुरु पूर्णिमा में मैं उनके चरणों के पास बैठने का सौभाग्य माँग पाती थी। संयोगवश बीच में बहुत-सी घटनाएँ हुयीं और 1958 में उन्होंने हमें दीक्षा दी। तब से तो फिर हमारा सम्बन्ध गुरु और शिष्य का ही हो गया। हम लोग उनके साथ रहते, उनका काम करते। उनके बारे में जो देखा, सुना, समझा और अनुभव किया, वह यही कि वे एक महान् आत्मा हैं जिनमें ईश्वरीय शक्ति की प्रचुर धारा बह रही है। वे सचमुच गुरु बनने योग्य हैं। स्वामी शिवानन्द जी ने उनको इस तरह की शिक्षा दी कि वे वास्तव में एक महान् गुरु बने और गुरु बनकर एक ऐसा आदर्श हमलोगों के सामने रखा, जिस पर हमें अभिमान हो। एक संन्यासी को अभिमान नहीं करना चाहिए, लेकिन इस विषय में हम जरूर अभिमान से कहते हैं कि वे हमारे गुरु थे, गुरु हैं और गुरु रहेंगे। *क्रमश:*

– 'मेरे आराध्य के चरणों में' से दिनश खरे, दुर्ग द्वारा संकलित

आयुर्वेद की महिमा

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

प्राचीन भारतीय मनीषियों के अनुसार आत्म-साक्षात्कार मानव जीवन का सर्वोत्कृष्ट लक्ष्य है। इस लक्ष्य से सम्बन्धित समस्त पहलुओं को उन्होंने चार वेदों में संकलित किया। अपने चिन्तन में उन्होंने मानव के आध्यात्मिक जीवन को ही नहीं, बल्कि भौतिक शरीर को भी पर्याप्त महत्त्व दिया। उन्होंने मानव शरीर को सांसारिक सुख तथा आध्यात्मिक आनन्द के अनिवार्य साधन के रूप में स्वीकार किया। इसलिए उन्होंने शारीरिक स्वास्थ्य, सामर्थ्य, ओज, उत्साह एवं दीर्घ आयु की प्राप्ति पर पर्याप्त बल दिया। उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घ आयु की प्राप्ति हेतु उन्होंने आयुर्वेद नामक एक अलग, स्वतन्त्र वेद की ही रचना कर दी।

आयुर्वेद शारीरिक संरचना, स्वास्थ्य एवं सर्वांगीण चिकित्सा का विलक्षण विज्ञान है। यह एक ऐसा चिकित्सा-शास्त्र है जो न केवल विभिन्न प्रकार के रोगों को दूर करने, बल्कि उनके कारणों एवं स्रोतों को भी समूल नष्ट करने की विधियाँ प्रतिपादित करता है। यह महान् चिकित्सा विज्ञान सर्वाधिक प्राचीन रोग-अवरोधक चिकित्सा पद्धति भी है। भारत में लगभग चार हजार वर्षों से प्रवीण वैद्यों द्वारा इसका प्रयोग किया जाता रहा है। प्रसिद्ध वैद्यों द्वारा इस क्षेत्र में शोध किये गये हैं तथा आयुर्वेद की श्रेष्ठता एवं उपयोगिता को सत्यापित किया गया है। वागभट, माधव, जीवक एवं बनारस के भाव मिश्र जैसे मनीषियों ने इसके महत्त्व एवं उपयोगिता को उजागर किया है। अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने भी इस विज्ञान की विशेषताओं को स्वीकार किया है। प्राचीन यूनान के लोगों ने भी मनोविज्ञान एवं चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में आयुर्वेद के दर्शन एवं प्रयोग को आधार बनाया।

आयुर्वेद का उद्भव

एक बार हिमालय पर्वत पर अगस्त्य, बादरायण, भरद्वाज, च्यवन, गर्ग, गौतम, जमदग्नि, कश्यप, मार्कण्डेय, नारद, पराशर, शाण्डिल्य, वामदेव, वसिष्ठ, विश्वामित्र आदि अनेक ऋषियों का सम्मेलन हुआ। यह सम्मेलन शारीरिक बीमारियों पर चर्चा हेतु आयोजित किया गया था। ऋषियों का मानना था कि शरीर ही अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष का साधन है, किन्तु अनेक प्रकार की

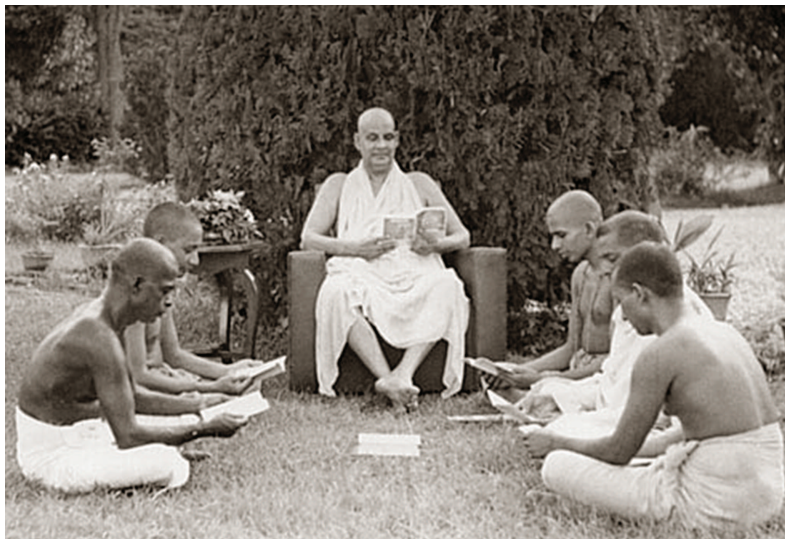

बीमारियों के कारण मानव इन पुरुषार्थों को प्राप्त करने में असक्षम हो जाता है। अत: उन्होंने महर्षि भरद्वाज से निवेदन किया कि वे इन्द्र के पास जाकर आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त करें और वापस आकर मानव समाज को व्याधियों से मुक्त करें। उन्होंने वैसा ही किया। इन्द्र से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर उन्होंने सभी ऋषियों को इस विद्या की शिक्षा दी और वे रोगमुक्त होकर अपनी साधना करने लगे।

इन्द्र ने अपने शिष्य अत्रेय को भी इस विद्या की शिक्षा दी। 'अत्रेय संहिता' आयुर्वेद का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। उनके पूर्व स्वयं ब्रह्मा ने इस शास्त्र का प्रतिपादन किया। उनका ग्रन्थ आठ प्रमुख भागों में विभाजित है। इस ग्रन्थ में एक सौ अध्याय एवं प्रत्येक अध्याय में एक सौ पद्य हैं। वैदिक युग के एक महान् ऋषि चरक की 'चरक संहिता' आज भी आयुर्वेद का एक मानक ग्रन्थ है। इसी प्रकार सुश्रुत रचित 'सुश्रुत आयुर्वेद' इस विज्ञान का एक प्राचीन और प्रामाणिक ग्रन्थ है। स्वर्ग के शल्य-चिकित्सक धन्वन्तरी बनारस के राजा दिविदास के रूप में इस पृथ्वी पर आए और उन्होंने सुश्रुत को इस विद्या का ज्ञान प्रदान किया। बनारस के ही भाव मिश्र ने सोलहवीं शताब्दी में 'भावप्रकाश' नामक विशाल ग्रन्थ की रचना की। इसमें पूर्व के ग्रन्थों के प्रमुख अंशों का संग्रह है। औषधि एवं आहार जैसे विषयों पर संस्कृत में अनेक ग्रन्थ हैं। 'राज-निघंटु' इस विषय का सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ है। अत्रेय के शिष्य हरित द्वारा रचित 'हरित संहिता' औषधि विज्ञान का एक मानक ग्रन्थ है।

आयुर्वेद का महत्त्व

हाल के वर्षों के अनुभव बताते हैं कि मलेरिया की चिकित्सा में आयुर्वेदीय पद्धति एलोपैथी के समान ही प्रभावशाली है। गठिया के निवारण में तो यह अन्य सभी पद्धतियों एवं विधियों से श्रेष्ठतर सिद्ध हुई है। इंग्लैण्ड में एक समय ऐसा आया जब प्रवीण चिकित्सकों की देखरेख में 'कुनाइन' के प्रयोग के बावजूद मलेरिया के रोगी मरने लगे। ऐसी स्थिति में उन्होंने नीम एवं चिरैता की छाल से चिकित्सा शुरू की तथा सभी रोगी रोगमुक्त हुए। यूरोपीय औषधियों में आज इन्हें समुचित स्थान दिया जाता है।

अन्य देशों की तुलना में भारत, बर्मा, थाइलैण्ड तथा श्रीलंका में सर्वाधिक औषधीय वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। भारतीय औषधि साहित्य में ऐसी 2000 वनस्पतियों का उल्लेख किया गया है। ऋग्वेद में भी औषधीय जड़ी-बूटियों की चर्चा है। आयुर्वेद में जड़ी-बूटी द्वारा होने वाली चिकित्सा का विस्तृत वर्णन मिलता है। प्राचीन चिकित्सा विज्ञान का यह प्रमुख आधार था।

मानव शरीर के आन्तरिक अंगों पर तो एक सम्पूर्ण उपनिषद् ही है। इसमें स्नायुओं, शिराओं तथा धमनियों की संख्या दी गयी है एवं हृदय, प्लीहा तथा यकृत का वर्णन किया गया है। इस उपनिषद् में भ्रूण के निर्माण तथा वृद्धि की भी चर्चा है।

ऋग्वेद में एक ऐसी महिला की चर्चा आती है जिसका पैर कट गया था। उसे लोहे का एक कृत्रिम अंग दिया गया था ताकि वह चल-फिर सके। इसी प्रकार कृत्रिम नेत्रों का भी उल्लेख मिलता है। गौतम बुद्ध के व्यक्तिगत चिकित्सक, जीवक तो सफल कपालीय शल्य-चिकित्सक थे। इसी प्रकार त्वचा उपरोपण, प्लास्टिक सर्जरी, मोतियाबिन्द का ऑपरेशन, अंगच्छेदन एवं सिजेरियन ऑपरेशन भी सफलतापूर्वक किये जाते थे।

भोज प्रबन्ध में चर्चा आती है कि सन् 927 ई. में धार के राजा भोज की कपालीय शल्य-चिकित्सा हुई थी। दो शल्य-चिकित्सकों ने उन्हें सम्मोहिनी नामक दवा देकर बेहोश किया। शल्य-चिकित्सा की सम्पूर्ण प्रक्रिया की समाप्ति के बाद उन्हें दूसरी औषधि देकर होश में लाया गया। चरक और सुश्रुत ने भी 'संवेदनाहारी' के उपयोग का उल्लेख किया है।

चरक विषहर, वमनकारी तथा रेचक दवाओं के साथ-साथ अन्य अनेक बीमारियों के इलाज से सम्बन्धित दवाओं के विशेषज्ञ थे। वे आहार सम्बन्धी विज्ञान के भी ज्ञाता थे। सुश्रुत तो अपने समय के सर्वश्रेष्ठ शल्यचिकित्सक

थे। वे 'एसेप्टिक सर्जरी' करते थे। वैदिक साहित्य में स्काल्पेल्स, लेन्सेट्स, फोर्सेप्स, केथेटर तथा आरी जैसे सर्जरी के उपकरणों की चर्चा है।

संस्कृत तथा पाली ग्रन्थों में पेचिश, पीलिया, मधुमेह, यक्ष्मा तथा हृदय-रोग समेत अनेक बीमारियों तथा उनकी चिकित्सा का वर्णन मिलता है। इनमें स्पष्ट उल्लेख है कि शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में भी पर्याप्त प्रवीणता उपलब्ध थी तथा खोपड़ी, मस्तिष्क एवं उदर के ऑपरेशन सफलतापूर्वक किये जाते थे।

चरक, सुश्रुत, वागभट, माधव एवं शारंगधर महान् ऋषि एवं आयुर्वेद के प्रवर्तक थे। वे सभी योगी थे। वे प्रेक्षण एवं विश्लेषण की महान् शक्ति से युक्त थे। उनके शिष्यों द्वारा आश्चर्यजनक शोध किये गये। भारत में औषधीय जड़ी-बूटियों एवं वनस्पतियों की अत्यधिक उत्पादकता के कारण उन्हें अपने अध्ययन एवं शोध में बहुत सहायता मिली।

आयुर्वेद की तीन प्रमुख शाखाओं का सम्बन्ध रोगों के कारण, लक्षण एवं उपचार से है। आयुर्वेद के उपचारात्मक सिद्धान्त सामान्यत: एलोपैथी के समान ही हैं। ये प्रधानत: तीन हैं – हानिकर कारकों को दूर करना, क्षतिग्रस्त शरीर एवं मन को प्रशमित करना तथा रोग के कारण का उन्मूलन। अन्तर केवल विभिन्न पद्धतियों द्वारा अपनायी गयी विधियों में है। आयुर्वेद में शरीर

के तीन दोषों और उनके सन्तुलन पर बहुत बल दिया जाता है। *दोष धातु मल मूलं हि शरीरम्* – दोष, धातु एवं मल मानव शरीर के तीन प्रमुख संघटक हैं। आयुर्वेद के अनुसार तीन दोषों, सात धातुओं तथा तीन मलों से हमारे शरीर की रचना हुई है एवं तीन दोषों में अव्यवस्था के कारण ही बीमारी होती है। अच्छे स्वास्थ्य का तात्पर्य उनके बीच सामंजस्य और सन्तुलन से है।

जीवन का विज्ञान

आयुर्वेद जीवन का विज्ञान है। यह रोगोपचार, उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घायु प्राप्त करने का मार्ग बताता है। आयुर्वेद स्वस्थ एवं बीमार, सभी लोगों के लिये उपयोगी है। साथ-ही आयुर्वेदीय दवाएँ तुलनात्मक रूप से सस्ती भी हैं। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में निर्दिष्ट विधियों से तैयार की गयी औषधियाँ अति प्रभावशाली होती हैं। उनकी उपचारात्मक क्षमता में तनिक भी सन्देह की गुंजाइश नहीं हो सकती।

भारत में अति प्राचीन काल से आयुर्वेद का प्रचलन रहा है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में आयुर्वेद एवं सिद्ध-पद्धति की अहम् भूमिका रही है। सुलभ, सस्ती एवं प्रभावी होने के कारण ये पद्धतियाँ लोकप्रिय रही हैं, किन्तु इनसे सम्बन्धित ज्ञान कुछ विशेषज्ञों तक ही सीमित रहा। औषधियों के मानकीकरण के अभाव के कारण एलोपैथिक पद्धति के समान इसकी प्रगति न हो सकी।

रोगों के कारण, लक्षण एवं उपचार के निरूपण के सम्बन्ध में आयुर्वेदीय चिकित्सक का निर्णय बहुत सही एवं वैज्ञानिक होता है। वह रोगी की नाड़ी, नेत्रों एवं चेहरे को देखकर रोग का निर्धारण कर लेता है। वह उपयुक्त रसों के सही अनुपात में सम्मिश्रण द्वारा रोगी के वात, पित्त एवं कफ नामक त्रिदोषों के बीच सामंजस्य स्थापित कर देता है।

कुछ ऐसी बीमारियाँ हैं जिनका उपचार आयुर्वेद द्वारा ही सम्भव है। एलोपैथी के पास उनका निदान नहीं है। एलोपैथिक चिकित्सकों को अनेक उपयोगी देशज औषधियों की जानकारी नहीं है। आयुर्वेदीय चिकित्सकों द्वारा अपनायी गयी अनेक अनुभवात्मक उपचार विधियाँ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। प्राचीन काल के आयुर्वेदीय चिकित्सकों के ज्ञान को आधुनिक एलोपैथिक विशेषज्ञ नये आविष्कार के रूप में प्रकाश में ला रहे हैं। यदि चरक द्वारा विहित उपचारात्मक विधियों का अनुसरण किया जाय तो संसार में जीर्ण रोग या अशक्तता से ग्रस्त एक भी व्यक्ति नहीं मिलेगा।

आयुर्वेद स्वयं में एक पूर्ण विज्ञान है जिसमें चिकित्सा, औषधि एवं शल्य-चिकित्सा विज्ञान शामिल हैं। प्राचीन काल के ऋषि-मनीषी चमत्कारी शक्ति से युक्त थे। कालक्रम से ऋषि-मनीषियों ने आयुर्वेदीय चिकित्सा का कार्य अपने शिष्यों को सुपुर्द कर दिया। उनके बाद यह उत्तरदायित्व उनके अनुयायियों पर आया। समय बीतता गया। काल के एक लम्बे अन्तराल के बाद आयुर्वेद पर कुछ परिवारों का एकाधिकार स्थापित हो गया। योग्य शिक्षकों की कमी हो गई। कोई विद्यालय या महाविद्यालय भी नहीं था जहाँ आयुर्वेद से सम्बन्धित शिक्षा या व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किया जा सके।

आयुर्वेद के क्षेत्र में कार्य करने वाले लोग स्वार्थी होते गये। आत्मत्याग एवं सेवा-भाव का अभाव तथा विवाद एवं प्रतियोगिता का बोलबाला हो गया। ऋषि-मनीषियों द्वारा लिखित पुस्तकें ऐसे लोगों के हाथों में आ गयीं जिनके मन में मानव-कल्याण के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी। वे केवल धन कमाने हेतु इन पुस्तकों का उपयोग करने लगे। इस प्रकार आयुर्वेद के क्षेत्र में सुयोग्य एवं समर्पित मार्गदर्शकों का अभाव हो गया। शाश्वत आशीर्वाद के रूप में प्राप्त यह विज्ञान आंशिक रूप से विस्मृति के गर्त्त में समा गया।

यहाँ चरक के एक आदर्श विचार को उद्धृत करना समीचीन होगा – 'न अपने लिए, न किसी सांसारिक इच्छा की पूर्ति के लिए, बल्कि केवल दु:खी मानवता की भलाई के लिए रोगियों की चिकित्सा कीजिए। जो रोगोपचार का व्यापार करते हैं, वे स्वर्ण त्यागकर धूल एकत्र करते हैं।'

हमारी हार्दिक इच्छा है कि अपने पूर्वजों एवं ऋषि-मनीषियों से प्राप्त इस चिकित्सा पद्धति को प्राचीन काल के समान ही महत्त्वपूर्ण स्थान मिले। यह एक अति सन्तोषजनक बात है कि इस आर्यभूमि के कुछ उदारमना लोग इस प्राचीन चिकित्सा पद्धति को पुनर्जीवित करने का भरपूर प्रयास कर रहे हैं।

एक वैज्ञानिक पद्धति

आयुर्वेद का अध्ययन करने वाले पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार भारतीयों ने बिना किसी बाह्य सहायता के अपने चिकित्सा विज्ञान का विकास किया। यह स्वीकार किया गया है कि अरबों ने अपने चिकित्सा विज्ञान के विकासक्रम में आयुर्वेदीय औषधि विज्ञान से बहुत कुछ ग्रहण किया। यह भी एक मान्य तथ्य है कि यूनान ने भी अपने औषधि विज्ञान के विकास में आयुर्वेद से पर्याप्त सहायता प्राप्त की।

चरक ने आयुर्वेद के उपलब्ध साहित्य का संशोधन एवं क्रमबद्ध संकलन किया। वे पंजाब क्षेत्र में निवास करने वाले ऋषि थे। उन्होंने स्वास्थ्य विज्ञान एवं रोग निवारण की दृष्टि से अपने ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ चिकित्सा साहित्य को उनकी महान् देन है। प्राचीन भारत का एक अन्य महान् चिकित्सा साहित्य सुश्रुत रचित है। यह शल्य-चिकित्सा से सम्बद्ध है।

आयुर्वेद के सम्बन्ध में प्राय: ऐसा कहा जाता है कि यह विद्या वैज्ञानिक नहीं, बल्कि पूर्णत: अनुभवात्मक है। यह आरोप सर्वथा निरर्थक एवं असंगत है। यह गलत धारणा उन लोगों द्वारा प्रतिपादित एवं प्रचारित की जाती है जो आयुर्वेद को एलोपैथी से निम्नतर मानते हैं।

आयुर्वेद प्रधानत: जड़ी-बूटियों, पौधों एवं पत्तियों पर आधारित है। पुस्तकों में स्पष्ट निर्देश दिये गये हैं कि उन्हें कब, किस अवस्था में तथा किस प्रकार एकत्र किया जाय। औषधियों को तैयार करने के सम्बन्ध में भी सूक्ष्म एवं विस्तृत विवरण उपलब्ध हैं। किसी औषधि को तैयार करने में प्रयुक्त होने वाले ईंधन तक का भी स्पष्ट वर्णन मिलता है।

रसायन चिकित्सा द्वारा कायाकल्प सम्भव होता है। एक आयुर्वेदीय चिकित्सक नाड़ी के स्पर्श द्वारा रोग एवं रोगी की स्थिति की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेता है। इस पद्धति में जड़ी-बूटी एवं भस्म की अहम् भूमिका होती है। जड़ी-बूटी की थोड़ी-सी मात्रा से ही मूत्राशय, गुर्दे या पित्ताशय की पथरी विघटित हो जाती है। विभिन्न प्रकार के आसव, अरिष्ट, तैल, काशायम्, चूर्ण, लेप, गुटिका, घृतम्, भस्म, रस, रसायन, लेह्यम् तथा द्रवकम् के उपयोग से असाध्य रोगों का निवारण सम्भव होता है।

पुनरुत्थान की आवश्यकता

आयुर्वेद के अनेक पहलुओं को भारत के धार्मिक एवं सामाजिक रीति-रिवाजों में शामिल किया गया है। आज आवश्यकता यह है कि उन्हें आधुनिक वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया जाय। सरकारी सहायता के अभाव तथा सदियों के उतार-चढ़ाव के बावजूद आयुर्वेदीय पद्धति आज भी जीवित एवं सक्रिय है। इससे स्पष्ट होता है कि इसमें अद्भुत तेज, ओज एवं ऊर्जा निहित है। भारत में इसकी जड़ें बहुत गहरी गयी हैं। अत: इसका कभी अन्त नहीं हो सकता।

आज भारत एक स्वतन्त्र राष्ट्र है। भारत सरकार एवं समस्त भारतीयों का यह कर्तव्य है कि वे अपनी इस अति उपयोगी, चमत्कारी, वैज्ञानिक तथा

देशज चिकित्सा पद्धति को पुनर्जीवित एवं हर प्रकार से विकसित करने का प्रयास करें। आयुर्वेद आर्य संस्कृति का अभिन्न अंग है। अनेक राजनैतिक-सामाजिक कारणों से यह पृष्ठभूमि में चला गया। यह एक शुभ संकेत है कि आज इसके पुनर्जागरण का प्रयास प्रारम्भ हो गया है। इसे इसके वैज्ञानिक स्वरूप में पुनर्स्थापित करने हेतु यह आवश्यक है कि औषधियों की गुणवत्ता, उत्पादन विधि, प्रभाव की मात्रा एवं अनुपान विधि का मानकीकरण किया जाय।

वर्तमान आयुर्वेदीय संस्थाओं को ठोस आधार प्रदान करने की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में आयुर्वेदीय औषधालय खोले जाने चाहिए। शोध संस्थानों की भी स्थापना होनी चाहिए। भारतीय जड़ी-बूटियों, पौधों, पत्तियों एवं छालों-छिलकों में अद्भुत चिकित्सात्मक गुण निहित हैं। गहन अध्ययन एवं शोध द्वारा उन्हें प्रकाश में लाना चाहिए। कुछ औषधशालाएँ इस दिशा में प्रयास भी कर रही हैं। भारत सरकार भी इस ओर ध्यान दे रही है। आज यह आवश्यक है कि सरकार, आयुर्वेदीय औषधशालाएँ, शोध तथा शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थान सब मिलकर इस अति उपयोगी चिकित्सा विज्ञान के विकास में सक्रिय सहयोग प्रदान करें।

आयुर्वेद शत-प्रतिशत देशज पद्धति है। यह हमारी स्थिति-परिस्थिति तथा वातावरण के अति अनुकूल है। यह सुलभ, सस्ती तथा सर्वाधिक लाभदायक चिकित्सा विधि है। इसका सर्वांगीण विकास राष्ट्र तथा मानवता के हित में है।

योग में सजगता का महत्त्व

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

योग और यौगिक क्रियाओं की आधारशिला सजगता है। साधारणतया सजगता का अर्थ अपने चारों ओर तथा अपने भीतर होने वाली घटनाओं को जानना, समझना और महसूस करना होता है। प्राय: लोग वह सब थोड़ा बहुत समझ पाते हैं जो उनके बाहर और भीतर घटित हो रहा है। यह सजगता का निम्न स्तर है। जैसे-जैसे हम आंतरिक और बाह्य विषय वस्तुओं से जुड़ते जाते हैं और उनमें निहित एकता को देखने-समझने लगते हैं, वैसे-वैसे हमारी सजगता सहज ही विकसित होती जाती है। जब ऐसा होने लगता है तब हम मन की सीमाओं को लाँघने लगते हैं। यही नहीं, अपने अस्तित्व के विभिन्न क्षेत्रों और आयामों को समझने की अन्तर्दृष्टि भी हमें प्राप्त होती है।

साक्षी भाव

योग में सजगता का अर्थ है तटस्थ होकर अपने मानसिक और शारीरिक क्रियाकलापों का अवलोकन करना। व्यक्ति जब सजग रहता है, तब वह अपनी बाह्य और आन्तरिक गतिविधियों को एक साक्षी की तरह देख सकता है। तब उसकी सजगता शरीर और मन की सीमाओं से परे जा सकती है। अर्थात् ऐसा कुछ है, जो घटनाओं को देखता है, साक्षी की तरह पृष्ठभूमि में रहकर मन और शरीर के कार्यों का अवलोकन करता रहता है। यदि आप केवल इतना अनुभव कर सकें, तो यह स्वयं के प्रति आपकी धारणाओं को बदलने के लिए पर्याप्त है। इस प्रकार आप पृष्ठभूमि में उपस्थित रहने वाले साक्षी तत्त्व के प्रति सजग हो जाते हैं। ऐसे कम ही लोग हैं जिन्हें सहज ही इसकी अनुभूति होती है, क्योंकि अधिकतर लोग अपने शरीर और मन के कार्यों में ही खोये रहते हैं। मनुष्य में निहित यह साक्षी तत्त्व योग की भाषा में सजगता के नाम से जाना जाता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि सजगता मनुष्य को प्राप्त होने वाला एक विशेष वरदान है। पशु कोई भी कार्य सजगतापूर्वक नहीं करते। मानव के पास ऐसा करने की क्षमता है, लेकिन वह इस क्षमता का उपयोग नहीं करता। अधिकतर मनुष्य अपने विचारों और शरीरों में ही खोये रहते हैं। यहाँ तक कि वे यह समझने लगते हैं कि उनके कार्य ही उनका स्वभाव है। सजग रहकर हम अपना

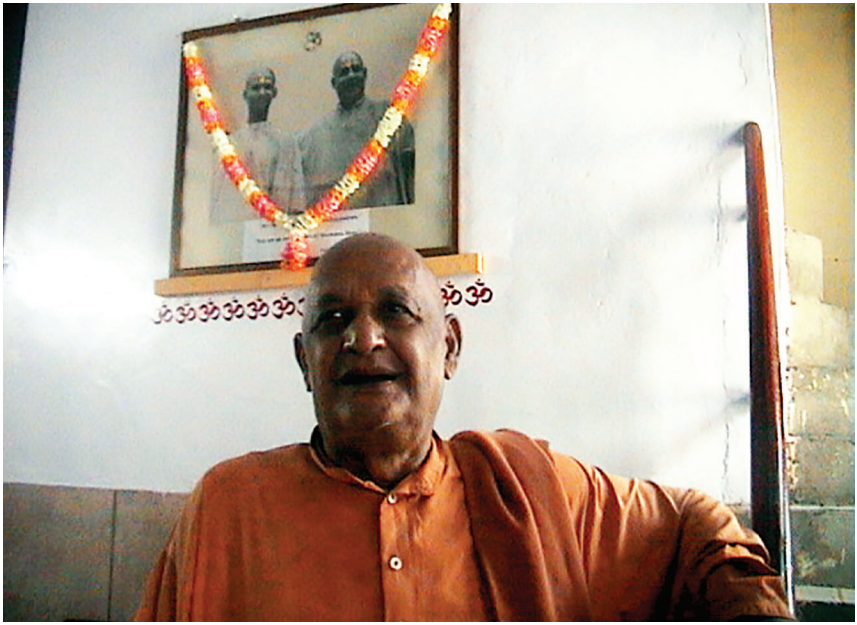

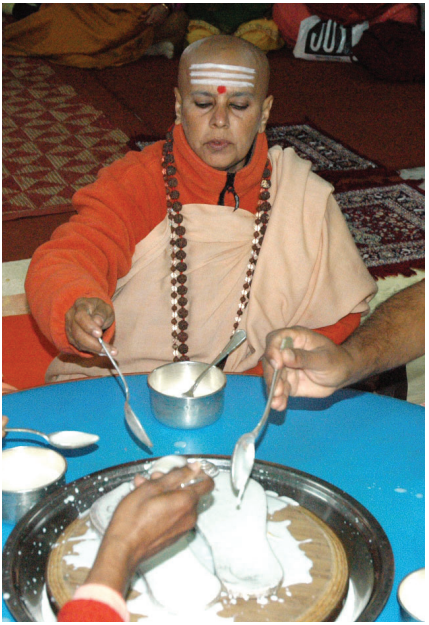

निरीक्षण कर सकते हैं कि मन और शरीर से निर्मित हमारा व्यक्तित्व कितना सही है। सजगता से हमें इस बात का बोध होता है कि हमारा स्वभाव हमारे मन और शरीर से अलग है। मन और शरीर मात्र हमारे स्थूल वाहन हैं।

योग साधना व्यक्ति की सजगता को विकसित करने का प्रयत्न करती है, ताकि वह अपने आप का निरीक्षण कर सके, अपने शारीरिक क्रियाकलापों तथा मानसिक विचार प्रक्रियाओं को देख सके, समझ सके। व्यक्ति अपनी विचार-प्रक्रिया को ठीक उसी प्रकार देख सकता है, जिस प्रकार वह टेलीविजन देखता है। इस स्थिति में विचार ठीक टेलीविजन के कार्यक्रम के सदृश लगते हैं। यदि कार्यक्रम रोचक हुआ तो हम नाटक में इतने लीन हो जाते हैं कि हमें इस बात का पता ही नहीं रहता कि हम नाटक देख रहे हैं। इस प्रकार हम भी कहानी के एक अंग बन जाते हैं। हमारी विचार-प्रक्रिया फिल्म की तरह होती है – कभी भावनात्मक, कभी उत्तेजक, तो कभी निराशाजनक।

विचार कैसे भी हों, वे इतने मोहक होते हैं कि हममें से अधिकतर लोग प्रतिदिन चौबीस घण्टे उन्हीं में खोये रहते हैं। मन में चल रहे विचाररूपी इस सिनेमा में हम पूर्ण रूप से खो जाते हैं। मन के सम्मोहन को तोड़कर विचारों का निरीक्षण कर पाना और उनके प्रति सजग रहना सरल बात नहीं है। जब टेलीविजन का कार्यक्रम या सिनेमा समाप्त होता है तो हमें सहज ही मालूम हो जाता है कि हम मात्र दर्शक थे, कार्यक्रम से हम सम्बन्धित नहीं थे।

जन्म से ही हम अपने मन में चलने वाले विचारों के सिनेमा में उलझते रहते हैं और उसके यथार्थ स्वरूप का अनुभव नहीं कर पाते। हम केवल मन, उसकी गतिविधि और शरीर को ही अपने अस्तित्व की सम्पूर्णता मान बैठते हैं। परन्तु हममें ऐसी क्षमता है कि मन के पर्दे पर चलने वाले सिनेमा को एक द्रष्टा की भाँति, साक्षी की भाँति, उससे अलग रहकर देख सकें। फिर भी बहुत कम लोग इसे जानते हैं या इसका उपयोग कर पाते हैं। योग साधना द्वारा हम इस साक्षी तत्त्व को विकसित करने का प्रयास करते हैं। यदि व्यक्ति अधिक सजग हो जाए और अपने क्रियाकलापों का साक्षी बन जाए तो उसे अनेक अविश्वसनीय अनुभव होंगे। वह ऐसी अनेक बातों का अनुभव करने लगेगा जिनका अनुभव वह अपनी वर्तमान बोध-क्षमता से नहीं कर सकता। उसे अपने अस्तित्व का एक नया आयाम दृष्टिगोचर होने लगेगा। मन और शरीर के साथ तादात्म्य हमें अपने अस्तित्व के सीमित क्षेत्र में बाँध देता है। हम अपने को कैद कर लेते हैं, लेकिन यह कैद स्थायी नहीं है। स्वतंत्र होने की कुंजी हमारे

पास है। व्यक्तित्व, मन और शरीर की बेड़ियों को तोड़कर हम अस्तित्व के उच्च तथा उन्मुक्त आयामों में प्रवेश कर सकते हैं। सजगता ही वह कुँजी है।

प्रत्येक मानव में सजगता का विस्तार किया जा सकता है। मनुष्य में अपनी चेतना को जानने-समझने और उससे सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता होती है। उसमें मन और शरीर के बन्धनों से मुक्त होकर चेतना के माध्यम से कार्य करने की क्षमता होती है। निःसन्देह, मन और शरीर पहले की तरह कार्य करते रहते हैं, इस कारण उनमें कोई परिर्वतन नहीं आता, लेकिन जो व्यक्ति अधिक सजग होता है वह अपने में और चेतना में कोई अन्तर नहीं समझता। वह अपने को चेतना ही समझने लगता है, इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। वह चेतना से अपने को अभिन्न समझने लगता है, शरीर और मन से नहीं।

सजगता का विकास

आसन-प्राणायाम तथा ध्यान करते समय सजगता पर जोर दिया जाना चाहिए। इस सजगता का अर्थ है कि आपने अपना ध्यान किसी कार्य विशेष के प्रति लगा दिया है, जैसे श्वसन-क्रिया। साथ ही साथ आप यह भी जानते हैं कि आप किसी विशेष कार्य पर ध्यान दे रहे हैं। दूसरे शब्दों में यदि आप अपनी

श्वास के प्रति सजग हैं तो इसका मतलब है कि आप जानते हैं कि आप श्वास ले और छोड़ रहे हैं और साथ ही आप श्वसन क्रिया के साक्षी भी हैं। आप अलग रहकर अपने अन्दर घटित होने वाली घटनाओं को देख रहे हैं। यह उच्चतर सजगता की ओर उठाया गया पहला कदम है। आपने अपने शरीर की गतिविधियों को साक्षी-भाव से देखना प्रारम्भ कर दिया है। आगे चलकर आप अपने मन के क्रियाकलापों को भी साक्षी की तरह देख सकेंगे। उसके बाद आप धीरे-धीरे मन के गहन पक्षों को भी देख सकेंगे, भले ही अभी यह आपको असंभव जान पड़ता हो।

सजगता का सार है – इस तथ्य से परिचित होना कि आप कोई विशिष्ट क्रिया कर रहे हैं और उस क्रिया का अवलोकन भी कर रहे हैं। यदि आप अपना शरीर हिलायें और इसका अनुभव नहीं करें कि आपके शरीर हिल रहा है, और न ही इस हिलने की क्रिया का अवलोकन करें, तो इसका मतलब है कि आप सजग नहीं हैं। किसी कार्य में पूर्णत: खो जाना, उसी में उलझ जाना और उससे अभिन्न हो जाना–इसका तात्पर्य सजगता का अभाव है।

आसन-प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास करते समय सजगता प्रथम आवश्यकता है। इसके बिना योग की साधना अपना महत्त्व खो देती है और उसके पूरे लाभ नहीं मिल पाते। यदि आप क्रोधित, चिन्तित या अप्रसन्न हैं और आपका मन चंचल हो रहा है तो भी चिन्ता न करें। जब आप आसन कर रहे हों और हम आपको श्वास के प्रति सजग होने का परामर्श दे रहे हों, उस समय आपके मन में विचारों का तूफान चलने लगे, तो निराश न हों। विचारों की शृंखला और श्वास, दोनों को ही देखें, उनके प्रति सजग रहें, उनके साक्षी बनें।

आसन-प्राणायाम और ध्यान करने से सजगता बढ़ जाती है। प्रारंभिक स्तर पर सजगता क्या है, इसका भी थोड़ा-थोड़ा बोध होता है। धीरे-धीरे प्रयत्न करते रहने से आप सारे दिन साक्षी-भाव से अपने विचारों और शारीरिक क्रिया-कलापों का अवलोकन कर सकते हैं। इस प्रकार कोई भी अपने शरीर और मन को उनकी बनावट के अनुसार कार्य करते हुए देख सकता है, उनका अवलोकन कर सकता है। अपने शरीर और मन की गतिविधियों को ठीक उसी तरह देखा जा सकता है जिस तरह आप कठपुतली का नाच देखते हैं। इसलिए जब आप योग-साधना करते हैं तो इस बात का जरूर ध्यान रखें कि आप क्या कर रहे हैं। योग का तात्पर्य आपके गहन आंतरिक पक्षों को प्रकट करना और उनके प्रति आपको सजग बनाना है।

राजयोग की मुख्य धाराएँ

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

जुलाई 2021 में स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती द्वारा युवा योग मित्र मण्डल के सदस्यों को दिए गए योग शिक्षा सत्र का दूसरा सत्संग

आज का विषय है राजयोग। इसको प्राय: लोग जानते नहीं हैं और महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों को ही राजयोग का प्रामाणिक ग्रन्थ मानते हैं। लेकिन राजयोग की परम्परा इससे भी प्राचीन है। भगवान शिव ने सबसे पहले राजयोग की शिक्षा दानवों के गुरु, शुक्राचार्य को दी थी।

राजयोग की वैदिक परम्परा

दानवों का क्या काम है? आतंक मचाना। उनका गुरु बनना भी आसान नहीं था, क्योंकि जो अधर्म के मार्ग पर चल रहा है उसे धर्म के मार्ग पर कैसे लायें? शुक्राचार्य को बहुत टेढ़ी ऊँगली से घी निकालना पड़ा था। ऐसा भी नहीं था कि दैत्य उनकी बात को सहज रूप से स्वीकार करते थे। उनको भी परेशान करते थे कि आप हमको क्यों बदलना चाहते हैं? अगर कोई व्यक्ति एक आतंकवादी समूह का गुरु बन जाए और उन्हें सही मार्ग पर लाने का प्रयास करे तो परेशानी होगी ही। शुक्राचार्य को भी काफी परेशानी का सामना करना पड़ा था। भगवान शिव ने शुक्राचार्य को राजयोग की शिक्षा दी और कहा कि तुम दैत्यों को यह योग सिखाओ। स्वास्थ्य के लिये नहीं, बल्कि उनके मन, स्वभाव और सोच में परिवर्तन के लिये। इस प्रकार राजयोग की पहली शिक्षा भगवान शिव ने शुक्राचार्य को दी, और शुक्राचार्य ने दानव समूह में राजयोग को सिखलाना शुरू किया।

दानव समूह ने बहुत चीजों को सीखा, लेकिन जो सीखा उसका दुरुपयोग किया। इसलिये वे लोग सफल नहीं हो पाये। दानव समूह अपनी तपस्या के बल पर किसी भी देवता से वरदान ले सकते थे, जबकि मनुष्य ऐसा नहीं कर पाये। दानव लोग कर पाये क्योंकि उनमें एकाग्रता थी, तन्मयता थी। हठपूर्वक बैठ जाते थे बारह महीना, 'देखते हैं क्या होता है। मरना है तो मरेंगे, क्या फर्क पड़ता है, लेकिन अगर जीते हैं तो कुछ मिल जायेगा हमको!' ऐसा सोचकर वे लोग जब साधना और तपस्या का कुछ निर्णय लेते थे तो प्राय: सफल भी होते

थे। एकाग्रता उनमें ज्यादा थी। देवता भी उनकी मति को बदल नहीं पाते थे। यह संभव हुआ राजयोग के कारण क्योंकि यह मन को सुधारने की एक प्रक्रिया है।

औजार तो तुम्हें कोई दे सकता है, पर औजार का उपयोग तुम कैसे करते हो, यह तुम्हारे ऊपर निर्भर करता है। एक चाकू जैसे साधारण औजार के भी तीन गुण, तीन स्वरूप होते हैं। उसका एक सत्त्वगुणी स्वरूप होता है, एक रजोगुणी स्वरूप होता है और एक तमोगुणी स्वरूप होता है। अगर चाकू से तुम्हारी हत्या कर दें तो यह तमोगुणी स्वरूप है, अगर चाकू से हम अपनी या दूसरों की रक्षा अन्य लोगों या जानवरों से करें तो वह रजोगुणी स्वरूप है और अगर चाकू से हम शाक-सब्जी काटकर अपने शरीर का पालन-पोषण करें तो वह सत्त्वगुणी स्वरूप है। चाकू तो एक औजार है, लेकिन चलाने वाले के विचार पर निर्भर होता है कि इसका कैसे उपयोग होता है। हमारे गुरुजी कहते हैं कि इसी प्रकार व्यक्ति को योग से सिद्धि मिल सकती है, लेकिन इस सिद्धि का सदुपयोग और दुरुपयोग, दोनों संभव हैं। अगर दिमाग ठीक रहा तो सदुपयोग होगा, अगर दिमाग ठीक नहीं रहा तो सिद्धि का दुरुपयोग होगा।

हिरण्यकश्यप और रावण जैसे अनेक दैत्य हुये जिनके पास सिद्धि तो थी, लेकिन उनका मन नकारात्मक था जिसके कारण उनका पतन हुआ। कुछ मनुष्यों ने भी प्रयास किया जो बाद में ऋषि-मुनि कहलाये। उनको भी सिद्धि मिली, लेकिन उन्होंने सिद्धि का दुरुपयोग नहीं, सदुपयोग किया। यह हर व्यक्ति की मानसिकता पर निर्भर करता है कि हम किससे अपने आपको जोड़ते हैं।

राजयोग की परम्परा, जो शुक्राचार्य से शुरू होती है, इसमें भी अनेक साधु-महात्माओं का योगदान रहा, जिनमें से एक हैं महर्षि याज्ञवल्क्य। वे बिहार के ही निवासी थे और उन्होंने राजयोग को आगे विकसित किया। मूल राजयोग का आधार वेदान्त और तंत्र है, और महर्षि याज्ञवल्क्य द्वारा प्रतिपादित राजयोग लम्बे समय तक चला। यह है राजयोग की वैदिक परम्परा, शुक्राचार्य से लेकर याज्ञवल्क्य तक।

पातंजल योग से भिन्नता

उसके बाद सांख्य दर्शन का विकास होता है और इस दर्शन में एक चिंतक आते हैं जिनका नाम है महर्षि पतंजलि। वे वैदिक विचारधारा वाले साधु नहीं थे, बल्कि सांख्य दर्शन के प्रणेता, चिंतक और वैज्ञानिक रहे हैं। राजयोग की जो वैदिक परम्परा थी पूर्व से चली आई थी, उस पर उन्होंने सांख्य दर्शन के अनुसार अपना एक ग्रन्थ लिखा। अपने ग्रन्थ में पहली बार उन्होंने कुछ ऐसे बिन्दुओं को रखा जो पहले की वैदिक राजयोग संहिता में नहीं थे। वे अपने समय के एक प्रभावशाली व्यक्ति थे, जैसे महात्मा बुद्ध या महावीर थे। महात्माओं की विचारधाराओं को लोग स्वीकार करते हैं क्योंकि वे समयानुकूल, प्रभावशाली और व्यक्ति के लिये आवश्यक होती हैं। महर्षि पतंजलि का राजयोग दर्शन बहुत प्रचलित हुआ क्योंकि वह नयी चीज थी, और वैदिक राजयोग को लोगों ने धीरे-धीरे छोड़ दिया।

अब प्रश्न उठता है कि वैदिक राजयोग और पातंजल राजयोग, दोनों में क्या अन्तर है? पहला अन्तर, वैदिक राजयोग छ: योग अंगों से बना है जिसको कहते है षडंग योग, और पातंजल योग दर्शन अष्टांग योग है, आठ अंगों वाला। दूसरा अन्तर, वैदिक राजयोग लय की बात करता है। लय का मतलब मिल जाना, जैसे चीनी को तुम पानी में घोल दो तो चीनी का पानी में लय हो जाता है। वैदिक राजयोग में कहा गया है कि चेतना की अलग-अलग अवस्थाओं को एक-दूसरे से मिलाते जाओ, ये शुद्ध होती जायेंगी। जबकि

सांख्य से प्रभावित पातंजल योग दर्शन समाधि की बात करता है। एक कहता है लय और दूसरा कहता है समाधि। समाधि सांख्य दर्शन की विचारधारा है।

तीसरा अन्तर, पातंजल योग दर्शन में पहली बार द्रष्टा भाव को लाया गया। कहा गया कि तुम द्रष्टा बनो, देखो कि क्या हो रहा है। वैदिक राजयोग में द्रष्टा भाव नहीं है, वहाँ पर तुम अनुभव-कर्त्ता हो। अगर सिरदर्द हो रहा है तो हो रहा है, उसका तुम अनुभव कर रहे हो, लेकिन पातंजल योग दर्शन में कहा जाता है कि जो सिरदर्द हो रहा है उसको तुम देखो। शरीर को सिरदर्द का अनुभव भी हो रहा है और सिरदर्द को मैं द्रष्टा बनकर बाहर से देख भी रहा हूँ। द्रष्टा का यह सिद्धान्त महर्षि पतंजलि का है। वैदिक राजयोग में कहा गया कि जो हो रहा है उसको मैं अभी वर्तमान में अनुभव कर रहा हूँ और उसको सुधारना है। उसका अनुभव तो हो ही रहा है, वह अज्ञात नहीं है, फिर अलग से मैं बाहर जाकर क्यों देखूँ कि मैं यह अनुभव कर रहा हूँ। यह इनका तर्क है।

अगला अन्तर, पातंजल योग दर्शन योग को परिभाषित करते हुए कहता है – *योग: चित्तवृत्तिनिरोध:,* चित्तवृत्ति का निरोध योग है, लेकिन वैदिक राजयोग कहता है कि इन्द्रिय और प्राणों का निरोध ही राजयोग है। इसका उदाहरण दिया जाता है कि जीवन में जो अनुभव हुआ है वह तुम्हारे भीतर एक स्मृति के रूप में है। वह स्मृति तुम्हारे भीतर जीवन्त है, मरी नहीं है। बीस साल पहले तुम्हारा किसी से झगड़ा हुआ, आज जब तुम उस व्यक्ति को देखोगे तो सबसे पहले वही स्मृति आती है कि इस व्यक्ति के साथ मेरी झड़प हुई है। वही पहली स्मृति है, और उस समय जो आक्रोश या कष्ट अनुभव

किया था, वह फिर से जीवित हो जाता है। मतलब उस स्मृति में प्राण है। एक दृष्टान्त देता हूँ, पहले फोटो कागज पर निकालते थे। जब तक उस फोटो को छाया में रखो उसका रंग बदलता नहीं था, लेकिन फोटो को एक दिन धूप में रख दो तो उसका रंग फीका पड़ जाता था। इसलिए लोग फोटो को एलबम में चिपकाकर अलमारी में रख देते थे। एलबम वाली फोटो सुरक्षित रहती है, लेकिन जो बाहर लगी है उसका रंग फीका पड़ गया होगा। फोटो का रंग स्मृति के प्राण जैसा है। स्मृति से हम प्राण को हटा दें तो स्मृति मर जाती है। इसलिये इन्द्रिय और प्राण, इन दोनों को नियन्त्रित करना वैदिक राजयोग की शिक्षा है, जबकि महर्षि पतंजलि के अनुसार, जो सांख्य दर्शन से प्रेरित रहे हैं, चित्तवृत्ति को अपने वश में करना योग का प्रयोजन है।

एक बात और समझ लेनी चाहिये कि *योग: चित्तवृत्तिनिरोध:* सूत्र की व्याख्या करते हुए प्राय: सभी व्याख्याकार कहते हैं कि चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है, लेकिन जो बात करते हैं वह मन की करते हैं, चित्त की नहीं। जिस तनाव, परेशानी और चिन्ता की बात करते हैं वह मन में होती है, चित्त में नहीं। चित्त तो संस्कार, स्मृति, कर्म और प्रारब्ध से निर्मित होता है। जैसे आम के बीज से केवल आम का ही पेड़ निकलेगा, केले का नहीं, उसी प्रकार से स्मृति, संस्कार, कर्म और प्रारब्ध जो पहले का रहा है उसी ने हमारे इस जीवन का निर्माण किया है। इनसे अगर हम प्राण को हटा दें तो फिर इनका कोई अस्तित्व नहीं रहता। जिस व्यक्ति के साथ तुम्हारी झड़प हुई है अगर उस स्मृति से तुम प्राण को हटा दो तो व्यक्ति को फिर देखने पर वह स्मृति वापस नहीं आयेगी। तुम उससे सद्भावना के साथ मित्रवत् बात कर सकते हो। नहीं तो पुरानी चीज सामने प्रकट हो जाती है और तुम्हारे पूरे व्यवहार को बदल देती है। कहावत भी है कि कुत्ते की दुम को बीस साल पाइप में घुसाकर रखो, जब तक पाइप में है, सीधी है, लेकिन पाइप हटा दोगे तो जो पूंछ बीस साल सीधी रही है वह फिर टेढ़ी हो जायेगी। मनुष्य का आचरण और चिंतन कभी बदलता नहीं है, उसको कुछ समय के लिये पूंछ की तरह सीधा रख सकते हैं, लेकिन जब अनुशासन, संयम और ज्ञान का पाइप हट गया तो पूंछ फिर टेढ़ी हो जाती है।

इसीलिये पहले जमाने में जो साधु तपस्या करते थे उनसे कहा जाता था कि वे क्रोध नहीं कर सकते, क्योंकि क्रोध करने से उनका सब तपोबल नष्ट हो जाता था। सामर्थ्य था कि एक हुँकार से हम शत्रु को भस्म कर दें, लेकिन

नहीं, सब प्रकार की यातना सहनी पड़ती थी। विश्वामित्र रामजी को लेकर क्यों गये? क्या उनके पास वह शक्ति नहीं थी कि एक हुँकार से हम यज्ञस्थल की पूरी सुरक्षा कर दें? अवश्य थी, लेकिन अगर ऐसा करते तो उनका तपोबल क्षीण होता, क्योंकि तप और योग का प्रयोजन आत्मिक विकास के लिये है, आत्म-सुरक्षा के लिये नहीं। इसलिये कभी भी किसी साधु ने अपनी सिद्धि का अपनी सुरक्षा के लिये प्रयोग नहीं किया है, बल्कि हमेशा दूसरों के हित के लिये उसका उपयोग किया है।

स्मृति से प्राणों को हटा देना और चित्त को व्यवस्थित करना, यह राजयोग का प्रयोजन है। चित्त के व्यवस्थित होने से जीवन में गलतियाँ भी कम होंगी। भले ही दस गलतियाँ हो जाएँ, पर सौ नहीं होंगी। नब्बे गलतियाँ नहीं हुयीं, यह उपलब्धि है। राजयोग की ऐसी प्रणाली रही जिससे धीरे-धीरे मन की चंचलता को शान्त किया जाता है।

मन की चंचलता को शान्त करने का जो तरीका राजयोग में निश्चित किया गया उसे प्रत्याहार कहा गया। गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण प्रत्याहार को समझाते हुए कहते हैं कि जैसे कछुआ अपने अंगों को अपने कवच के भीतर समेटता है वैसे तुम अपनी इन्द्रियों को अपने भीतर समेटो, तब जाकर मन की चंचलता समाप्त होगी। अर्जुन ने पूछा था, 'भगवन्! मन तो बहुत चंचल है। हवा को कमरा में बन्द करना सरल है, लेकिन मन को कही बाँध करके रखना सरल नहीं है।' उसके उत्तर में कृष्ण जी ने कहा था कि अगर अपने मन को वश में करना है तो अपनी छ: इन्द्रियों को समेटो। छ: इन्द्रियाँ कौन-सी? *मन:षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति* – मन सहित पाँच इन्द्रियाँ इस शरीर में प्रवेश करते हैं, जिससे जीवन का बोध होता है, जीवन का निर्वहन होता है।

पातंजल योग दर्शन के बाद फिर और कोई महात्मा इस योग दर्शन को विकसित नहीं कर पाया। इस प्रकार राजयोग की दो ही परम्पराएँ हैं, पहली शुक्राचार्य और याज्ञवल्क्य की परम्परा है, दूसरी महर्षि पतंजलि की। एक वैदिक है और दूसरी सांख्य दर्शन से प्रभावित है।

बिहार योग परम्परा का योगदान

राजयोग की व्याख्या में हमारे गुरुजी की बहुत बड़ी भूमिका रही है। महर्षि पतंजलि ने अपने योगसूत्रों में अष्टांग योग की चर्चा करते हुए पाँच यमों और पाँच नियमों का उल्लेख मात्र कर दिया। आसन के सन्दर्भ में केवल कह

दिया – *स्थिरसुखमासनम्।* एक भी आसन का वर्णन नहीं किया है। प्राणायाम के बारे में कह दिया कि श्वास को रोकना कुंभक है और वही सबसे उत्तम प्राणायाम है। नाड़ी शोधन या उज्जायी या भ्रामरी जैसे किसी अभ्यास का जिक्र नहीं किया है। लगता है कि आसन-प्राणायाम हठयोग के प्रचलित अभ्यास रहे होंगे जिन्हें उन्होंने अपने ग्रन्थ में यम-नियम के बाद केवल एक स्थान दिया है। प्रत्याहार के बारे में भी वे ज्यादा कुछ नहीं कहते। कहते हैं कि इन्द्रियों को समेटना, मन को विषयों से हटा देना प्रत्याहार है। धारणा, ध्यान आदि को समाधि के अंगों से जोड़ देते हैं, वहाँ पर किसी भी अभ्यास का वर्णन नहीं है। उसके बाद सवितर्क समाधि, सविचार समाधि आदि आठ प्रकार की समाधियों के बारे में बतलाकर अष्टांग योग का वर्णन समाप्त करते हैं। मैं स्पष्ट करना चाह रहा हूँ कि महर्षि पतंजलि का राजयोग मात्र दर्शन है। उनके योग सूत्रों का ग्रन्थ केवल दर्शन और सिद्धान्त का ग्रन्थ है, शिक्षा का नहीं। राजयोग की व्यावहारिक शिक्षा शुक्राचार्य और याज्ञवल्क्य की परम्परा में है।

जब स्वामीजी मुंगेर आये तो सन् 1968 में पहला नौ महीने का योग प्रशिक्षण सत्र संचालित किया था। उस समय पहली बार मुंगेर की धरती पर विदेशियों के चरण पड़े थे और उस नौ महीने के सत्र में आसन-प्राणायाम-मुद्रा-बंध पुस्तक की नींव पड़ी। हर आसन को कैसे करना है, करने में क्या

सावधानी बरतनी है, क्या लाभ होगा, एकाग्र कहाँ होना है, श्वास की गति कैसी होनी है – उस समय एक-एक चीज हमारे गुरुदेव ने सिखलायी, और यह आसन-प्राणायाम का विश्व का पहला संकलन हुआ।

प्राणायाम भी पहली बार मुंगेर में सिखलाया गया। नेति क्रिया और नेति लोटा का, जो आज कोरोना के कारण विश्वप्रसिद्ध हो रहा है और जिसे अनेकों कंपनियाँ बना रही हैं, प्रचलन मुंगेर से ही हुआ। सबसे पहले मुंगेर में पंच-धातु का नेति लोटा बना था। योगनिद्रा का प्रचलन यहीं से हुआ। सबसे पहले स्वामीजी ने बतलाया कि प्रत्याहार के अन्तर्गत कौन-से अभ्यास हैं और उनकी शिक्षाओं को संकलित कर 'ध्यान – तंत्र के आलोक में' किताब छपी जिसमें अन्तर्मौन, अजपा-जप और चिदाकाश धारणा जैसे प्रत्याहार के अलग-अलग अभ्यासों के बारे में समझाया गया। उससे पहले कोई नहीं जानता था। मैं तो सीधा कहता हूँ कि आज विश्व में योग की जो जानकारी है, चाहे वह प्राणायाम-सम्बन्धी हो, चाहे आसन-सम्बन्धी हो, चाहे क्रिया योग हो, चाहे योग का कोई भी पक्ष हो, वह अपने आश्रम के कारण है। शंखप्रक्षालन का अभ्यास इसी आश्रम की देन है, अन्यथा सब कोई बस्ती का सैद्धान्तिक उल्लेख ही करते हैं। शंखप्रक्षालन कोई नहीं कहता है, हम ही लोग कहते हैं और यह स्वामीजी का आविष्कार है। योग की एक-एक चीज जो आज समाज में प्रचलित हो रही है, वह मुंगेर आश्रम की देन है। हो सकता है कि बाकी संस्थाएँ और भी अच्छे, प्रवीण तरीके से आसन वगैरह सिखला देते हों, लेकिन मूलत: योग विद्या का प्रचार मुंगेर से हुआ है।

राजयोग को भी आधुनिक समय के अनुसार संकलित और प्रस्तुत करने में स्वामीजी की बहुत बड़ी भूमिका रही है। उन्होंने प्रत्याहार पर बहुत काम किया, और उसके बाद धारणा पर हमने और स्वामी सत्यसंगानन्द ने काम किया। हमारे शास्त्रों में वर्णित धारणा के विविध अभ्यासों का पहली बार संकलन और प्रकाशन धारणा-दर्शन नामक पुस्तक में हुआ। तंत्र का एक साहित्य है विज्ञान भैरव तंत्र, जिसमें प्रत्याहार और धारणा की दो सौ से ज्यादा विधियाँ और उपाय दिये गये हैं। उसको प्रस्तुत करने का काम स्वामी सत्संगी ने किया है। इस तरह आधुनिक संदर्भ में राजयोग के विकास में, इसको समझने में, इसका प्रयोग करने में स्वामी सत्यानन्द जी और बिहार योग विद्यालय का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

– 16 जुलाई 2021, गंगा दर्शन

यौगिक जीवन पद्धति

स्वामी योगशिक्षानन्द सरस्वती, रायपुर

योग के द्वितीय अध्याय में अब योग एक जगह बैठकर केवल एक-आधा घंटा अभ्यास कर लेने की चीज नहीं है। इसे हमारे जीवन के हर क्षेत्र में, अपने विचारों, कर्मों और व्यवहार में लाना है, योग को हर क्षण जीना है, उपयोग में लाना है। दिनभर योग के कुछ अभ्यास होते रहें, ऐसी कुछ विधियाँ इस प्रकार हैं।

श्वास पर ख्याल

श्वास तो दिन-रात अपने आप चलते ही रहती है। इस श्वास के साथ अपनी सजगता को जोड़ देना है। यह ख्याल रहे, मालूम रहे कि श्वास आ रही है और जा रही है। बस इतना पर्याप्त है। हर समय काम के बीच-बीच में, खाली समय में, किसी की प्रतीक्षा करते समय, अगर ट्रेन लेट है तो स्टेशन में बैठे-बैठे श्वास को देखते रहिये। हो सके तो श्वास के साथ गुरु-मंत्र, सोऽहं या ॐ मंत्र जोड़ दें तथा नाभि से कंठ तक श्वास को आते व कंठ से नाभि तक श्वास को जाते हुये देखें तो यह अजपा-जप हो जायेगा। साथ ही श्वासों की गिनती भी कर सकते हैं। इस विधि को कभी भी कर सकते हैं, ज्यादा सोचने के बदले इसे करते रहें। गुरुदेव स्वामी सत्यानन्द जी ने कहा है – बीती बातों के बारे में अफसोस या भावी समस्याओं के बारे में चिंता करने के बजाय अजपा-जप का अभ्यास करो।

अंतर्मौन

दूसरा अभ्यास जो दिनभर किसी भी समय कर सकते हैं वह है अंतर्मौन। यह देखना, जानना कि मैं क्या सोच रहा हूँ, क्या विचार अपने से मेरे मन में आ रहे हैं। श्वास का ख्याल रखने की तरह बैठे हुये, लेटे हुये, चलते हुये, कुछ भी करते-करते यह अभ्यास सहज भाव से कर सकते हैं।

मन:प्रसाद

तीसरा अभ्यास जो दिनभर हर समय कर सकते हैं वह है हमेशा खुश रहना, बिना किसी कारण के खुश रहना। यह संभव है, क्योंकि खुश रहना तो हमारा

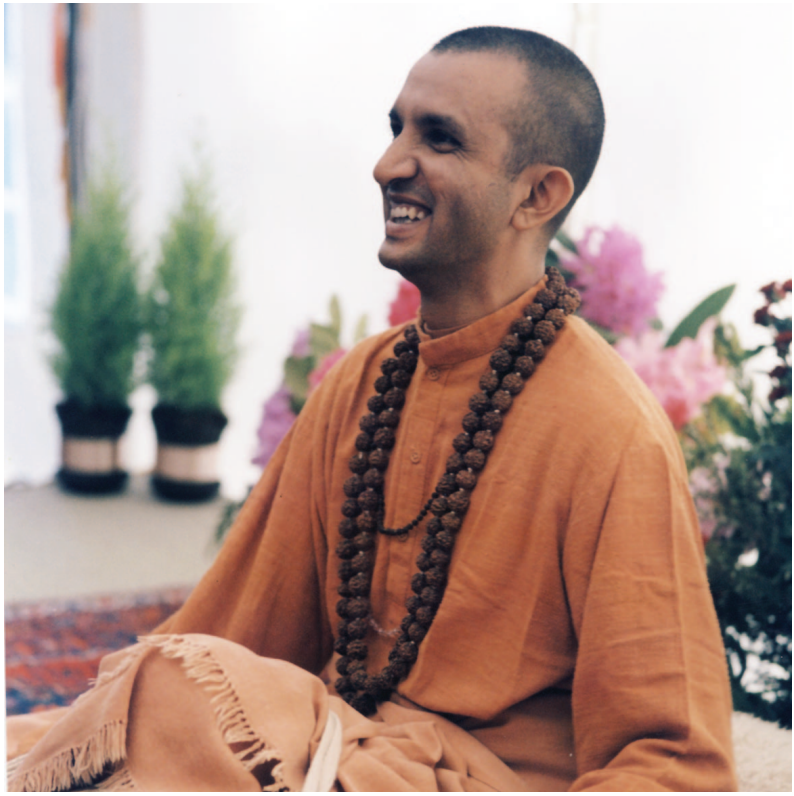

स्वभाव है, दु:खी रहना नहीं। इसको स्वामी निरंजनानन्द जी ने मन:प्रसाद यम के रूप में करने के लिये कहा भी है। प्रतिपक्ष भावना, नमस्कार, क्षमा व अन्य यम-नियम के अभ्यास भी अपने दिनभर के विचारों, कर्मों व व्यवहार को व्यवस्थित एवं सामंजस्यपूर्ण बनाये रखने के लिये करते रहें।

ऐसे छोटे-छोटे सरल अभ्यासों को करते हुये हम दिनभर यौगिक ढंग से जी सकते हैं। जरूरत है तो इन अभ्यासों को सजगतापूर्वक व निष्ठापूर्वक करने की। साथ ही साथ हम लोग जो अभ्यास अभी तक करते आये हैं जैसे सबेरे-शाम आसन, प्राणायाम, जप, दिनभर के काम से निवृत्त होने पर योगनिद्रा, रात्रि के समय या अन्य समय पर अजपा-जप, अंर्तमौन, ॐ का बैखरी उच्चारण तथा अपने दिनभर की समीक्षा करना – इन्हें भी करते रहें। इस प्रकार हम यौगिक ढंग से जीवन-यापन करके योग से भरपूर लाभ उठा सकते हैं। इसे कब शुरू करना, ऐसी बात नहीं है, अभी ही शुरू कर दें।

शिवानन्द स्तुति

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

ओ चैतन्य ज्योति! निराली।
जलते रहना ज्योति-अमर तुम!
कल्पांत-निशा में बनो दिवाली।
सुन्दर-सुन्दर भेंटे ले तुम।
सजाते रहना काराम्बर-थाली।
अनन्त-प्रलय के उत्तर तुम।
पुनरोदित करना दिन मणि माली।
इसी अम्बर में हो केवल।
चैतन्य-ज्योतिमय-सजल दिवाली।।
औ' होवे जग-अम्बर खाली।
ओ चैतन्य ज्योति! निराली।

जब दैन्य, ताप तथा मृत्यु-भय रूप-सन्तापानुभव,
मानवता के पग-पग में बाधक होता है;
जब-जब वह नैराश्य-दृष्टि से पुकार उठता है;
जब उसकी अवस्था निर्देशन की कामना करती है,
तब-तब एक महान्,
आनन्द कुटीर के विद्युत-गृह से
प्रकाश को उदयीभूत करता हुआ,
उन्हें देदीप्यमान् प्रकाश से
सत्, चित् तथा आनन्द का पथ निर्देशित करता है।

आनन्द कुटीर में स्थित, शिवानन्द-महान्!
अनन्त लीलामय हो, अथाह के स्वर की प्रत्यक्षता के समान,
समस्त सम्पूर्ण को जागृति का आह्वान देता है,
आध्यात्मिक-प्राण देता है,
मुक्ति का दान देता है, और प्रत्यक्ष भान होता है।

आज के संसार को संसार के वक्ष में स्थित
आनन्द कुटीर में व्याप्त,
स्वानन्दान्वित, किसी महान् की
महान् पारमात्मिक कृति का दर्शन होता है,
तो वह प्रिय प्रणेता के ही शब्दों में
'महान् की लीला' कहनी चाहिए!

कोई उसे लाख भुलाना चाहे,
पर वह नहीं भूल जाता है।
कोई अव्यक्त कण कण में,
व्यापकता होकर ही आता है।
अमित अथाह-विस्मृति-गर्भ से,
स्वर बन वह ही गाता है।
दीवालों में अंकित वह हो,
अमर कथा भी सुनाता है।
मरुस्थल में चरण-चिह्न बन
वह अज्ञातापार पथ दर्शाता है।
उद्देश्यों की बलिवेदी पर वह,
निज-आहूति दे देता है।
सत्य-प्रेम को आधार बना,
जीवन प्रासाद बनाता है।
जग को एक परिवार बना वह,
शासन-अन्त दिखाता है।
उस स्वर्ग की तो बात ही क्या,
वह यहीं स्वर्ग बसाता है।
चैतन्य-ज्योति बन कर वह,
अमर विभा छिटकाता है।।

जीवन में स्वास्थ्य, संतुलन और प्रसन्नता

स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती

फरवरी 2021 में बिहार पुलिस द्वारा आयोजित पुलिस सप्ताह के अन्तर्गत 'जीवन में स्वास्थ्य, संतुलन और प्रसन्नता' विषय पर दिये गये संदेश से उद्धृत

जीवन में स्वास्थ्य, संतुलन और प्रसन्नता लाना सभी के लिये प्रासंगिक है, विशेषकर पुलिस वर्ग के लिये। पुलिस वर्ग समाज का एक स्तम्भ है। उनकी न केवल अपने घर-परिवार की जिम्मेदारी रहती है, बल्कि समाज की रक्षा का दायित्व भी उन्हीं के कंधों पर है। इन दोनों दायित्वों को कुशलतापूर्वक निभा पाना एक चुनौती है, और जिस किसी भी विधि से उनके इस दायित्व-वहन में सहायता मिल सके, वह प्रासंगिक और उपयोगी होगी।

बिहार योग विद्यालय का बिहार पुलिस तथा अन्य पुलिस संस्थाओं के साथ पुराना सम्बन्ध रहा है। बिहार योग विद्यालय के संस्थापक, परम गुरुदेव स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी के पिताजी पुलिस में कार्यरत थे। वहीं से एक सम्बन्ध की शुरुआत होती है और जब बिहार योग विद्यालय की स्थापना हुई और योग को समाज के हर क्षेत्र में पहुँचाया गया तो उसमें पुलिस वर्ग अग्रणी था। मुंगेर, जमालपुर तथा बिहार के अनेक स्थानों में पुलिस अधिकारियों और कर्मियों के लिये योग प्रशिक्षण सत्र आयोजित किये गये। हैदराबाद की राष्ट्रीय पुलिस अकादमी में भी योग प्रशिक्षण दिया गया है। इस तरह एक लम्बे अर्से से सम्बन्ध चला आ रहा है और हमें प्रसन्नता है कि पुलिस वर्ग के साथ योग पर कुछ विचार-विनिमय करने का पुन: एक सुअवसर मिला है।

योग के अभ्यासात्मक और जीवनशैली पक्ष

आज का विषय एक तरह से योग का ही पर्याय है। जीवन में संतुलन, आनन्द, स्वास्थ्य और आरोग्य की प्राप्ति – यही योग की परिभाषा है, उपलब्धि है। गीता में कहा भी गया है – *समत्वं योग उच्चते,* हर परिस्थिति में संतुलित रह पाना, सामंजस्य बनाये रखना, यह योग की परिभाषा है, यह योग का लक्ष्य है। जब इस योग को अपने जीवन में उतारने की बात आती है तो प्राय: लोगों

के मन में कुछ गलतफहमियाँ रहती हैं। लोग समझते हैं कि योगाभ्यास या तो बहुत कठिन है या इसके लिये बहुत समय निकालना पड़ेगा। वास्तव में ये गलतफहमियाँ ही हैं। योग को अपने जीवन में अपनाने के लिये आपको अपनी दिनचर्या का कायाकल्प करने की कोई आवश्यकता नहीं, बल्कि योग के छोटे-छोटे पहलुओं को अपनी दिनचर्या में आप बड़ी आसानी से उतार सकते हैं और अपनी पूरी दिनचर्या को यौगिक बना सकते हैं। इस चर्चा में हम इन्हीं कुछ पहलुओं पर प्रकाश डालेंगे।

हमारी परम्परा में योग को एक व्यापक दृष्टिकोण से देखा गया है जिसके दो मुख्य पक्ष हैं – एक है अभ्यास और दूसरा है जीवनशैली। जिस तरह पक्षी को उड़ने के लिये दो पंख चाहिए, एक पंख से वह उड़ नहीं सकता, उसी तरह योग के ये दोनों पक्षों महत्त्वपूर्ण हैं। अगर हम अपने जीवन में इन्हें समायोजित कर पायें तो हम योग का अधिकतम लाभ अपने जीवन में देखेंगे।

पंचकोषों का सिद्धान्त

पहले हम योग के अभ्यासात्मक आयाम के अन्तर्गत योग की उन विभिन्न सरल विधियों की चर्चा करेंगे जिनका नियमित रूप से अभ्यास करके हम अपने जीवन में स्वास्थ्य एवं संतुलन ला सकते हैं, जीवन का स्तर उन्नत बना सकते हैं। इन विधियों की चर्चा करने से पहले यह जान लेना चाहिए कि योग मनुष्य को किस दृष्टिकोण से देखता है। यह जान लेने के बाद हम योग की विधियों की बेहतर समझ प्राप्त कर सकेंगे और उनकी अनुभूति भी गहरी होगी।

योग का मानना है कि मनुष्य का केवल हाड़-मांस का शरीर नहीं है। पंचभूतों से बना भौतिक शरीर मात्र हमारा स्थूल अस्तित्व है जिसे योग की भाषा में अन्नमय कोष कहते हैं। योग दर्शन के अनुसार अन्नमय कोष के अलावा हमारे चार अन्य सूक्ष्म कोष हैं। अन्नमय कोष से सूक्ष्म है प्राणमय कोष, जो प्राणों का आयाम है। प्राण वह जीवनी शक्ति है जो हमारी हर शारीरिक गतिविधि को संचालित करती है। उससे सूक्ष्म है मनोमय कोष, हमारे मन का आयाम जहाँ हम सोचते हैं, चिंतन करते

हैं, संकल्प-विकल्प करते हैं। उससे सूक्ष्म है विज्ञानमय कोष जो हमारी गहन स्मृतियों, संस्कारों और भावनाओं का क्षेत्र है और सबसे सूक्ष्म है आनन्दमय कोष, अर्थात् आत्मा का आयाम।

जब पंचकोषों के दृष्टिकोण से हम अपने व्यक्तित्व को देखते हैं तब हम समझते हैं कि हम केवल इस भौतिक शरीर के माध्यम से जीवन-यापन नहीं करते, हमारे अन्य आयाम भी हैं। हम जिस संतुलन, स्वास्थ्य और उत्कृष्टता की कामना कर रहे हैं, वह केवल इस भौतिक ढाँचे में नहीं, इन अन्य कोषों में भी करनी है। योग के विविध अभ्यास हमारे इन सभी कोषों को प्रभावित करने के लिए रचे गए हैं।

यौगिक कैप्सूल

लोगों की आम परेशानी और शिकायत रहती है कि जीवनचर्या व्यस्त है, उसमें योगाभ्यास के लिए समय निकाल पाना कठिन है। हमारे गुरुदेव, स्वामी निरंजनानन्द जी ने इसके समाधान के लिए यौगिक कैप्सूल का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। योग के कैप्सूल छोटी-छोटी यौगिक विधियों का सम्मिश्रण हैं जिन्हें दिन के अलग-अलग समय में किया जा सकता है। यह कोई आवश्यक नहीं कि आप अपनी व्यस्त दिनचर्या से दो-ढाई घंटे का समय निकालें, बल्कि योग की छोटी-छोटी विधियों को जीवन में जब जैसी आवश्यकता हो, कैप्सूल की भाँति उपयोग करें तो बहुत लाभ मिल पायेगा। ऐसा न सोचें कि कैप्सूल छोटी-सी चीज है, क्या असर करेगी। *'रबि मंडल देखत लघु लागा, उदय ताँसू तिभुवन तम भागा'* – जो चीज जितनी छोटी और सूक्ष्म होती है उसका असर प्राय: उतना व्यापक होता है। स्वामी निरंजनानन्द जी द्वारा प्रतिपादित कैप्सूल साधना में पाँच कैप्सूल हैं जिनमें योग के अभ्यासों को एक बहुत सटीक, क्रमबद्ध और वैज्ञानिक तरीके से व्यवस्थित किया गया है।

मंत्र साधना – पहला कैप्सूल है मंत्र साधना का और इसके लिए सबसे उपयुक्त समय है सबेरे जगते ही, शय्या त्याग से भी पहले। इस मंत्र साधना को धार्मिक दृष्टिकोण से नहीं देखना है कि इसके पहले शौच-स्नान आदि से निवृत्त होना है, बल्कि इसके पीछे वैज्ञानिक कारण को समझना है। मंत्रों का सम्बन्ध हमारे सबसे सूक्ष्ममय कोष, आनन्दमय कोष से है। इसका प्रभाव हमारे मन के अवचेतन आयाम पर पड़ता है। जब हम सबेरे जगते हैं तब न तो हम पूरी तरह चेतन हैं, न पूरी तरह सोये हैं, बल्कि एक अर्धजागृत अवस्था में हैं

जो मन की बहुत संवेदंशील अवस्था है। जब उस समय मंत्रों के स्पन्दन एक संकल्प के साथ चेतना में प्रवेश करते हैं तो अवचेतन मन में एक सकारात्मक तत्त्व का बीजारोपण होता है।

लोग प्रायः मंत्रों को धार्मिक दृष्टि से देखते हैं पर वास्तव में इनका धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं। मंत्र धर्मों से पहले विद्यमान हैं। मंत्र शास्त्र ध्वनि का, स्पन्दन का विज्ञान है और ऐसे अनेक वैज्ञानिक प्रयोग हुये हैं जिनमें विभिन्न मंत्रों का असर देखा गया और पाया गया कि शरीर और मस्तिष्क पर इनका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ये मंत्र सरल हैं जो भारतीय परम्परा में सदियों से चले आये हैं, जैसे महामृत्युंजय मंत्र, गायत्री मंत्र और दुर्गा जी के बत्तीस नाम। इन मंत्रों का कैप्सूल अगर हम सबेरे ले लें तो हमारे दिन की शुरूआत एक सकारात्मक तरीके से होगी।

आसन – दूसरा कैप्सूल है आसनों का। इसमें भी बहुत ज्यादा आसन करने की आवश्यकता नहीं है। एक सामान्य व्यक्ति को, जिसे कोई स्वास्थ्य समस्या या रोग नहीं है, अपना स्वास्थ्य बनाये रखने और अपने शरीर को स्फूर्त रखने के लिये ये पाँच आसन कर लेने चाहिये – ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन, कटिचक्रासन, सूर्य नमस्कार और विपरीतकरणी आसन। पहले चार आसनों के अंतर्गत हमारे मेरुदण्ड की पाँचों प्रमुख गतियाँ आ जाती हैं। ताड़ासन से मेरुदण्ड का खिंचाव होता है, तिर्यक् ताड़ासन से उसको दायीं- बायीं ओर झुका लेते हैं, कटिचक्रासन से उसे मोड़ लेते हैं और सूर्यनमस्कार में आगे और पीछे की ओर झुकना हो जाता है। विपरीतकरणी आसन से जो रक्त संचार गुरुत्वाकर्षण के कारण हमेशा नीचे की ओर होता है, कुछ देर के लिये उसका प्रवाह मस्तिष्क की तरफ आता है।

ये पाँच आसन स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये पर्याप्त हैं। इनका अभ्यास करने में बहुत ज्यादा समय भी नहीं लगेगा, दस-पन्द्रह मिनट

अधिक-से-अधिक। अगर हम नाश्ते से पहले, खाली पेट इनका अभ्यास कर लें तो हमारे शारीरिक ढाँचे और पेशियों पर, हमारे अन्नमय कोष पर सकारात्मक असर पड़ेगा। शरीर के भीतर के अंगों, विशेषकर अंतःस्रावी ग्रन्थियों पर भी लाभदायक प्रभाव होगा।

प्राणायाम – तीसरा कैप्सूल प्राणायाम का है, जिसका सम्बन्ध हमारे प्राणमय कोष से है, प्राणों का स्तर बढ़ाने से है। हमारे जीवन की गुणवत्ता वास्तव में हमारे प्राणों के स्तर पर निर्भर करती है। यदि प्राणों का स्तर निम्न है तो अपने आप शारीरिक गति मंद पड़ जायेगी, मन का स्तर गिर जायेगा, आशावादी और प्रसन्न रहने के बजाय चिन्ताग्रस्त तथा अवसादग्रस्त होने लगेंगे। प्राणों के स्तर का शरीर और मन, दोनों से गहन सम्बन्ध है, इसलिए प्राणायाम का बहुत महत्त्व है।

प्राणायामों में भी दो सरल अभ्यास पर्याप्त हैं, जिनमें पहला अभ्यास है नाड़ीशोधन प्राणायाम का। इसमें हाथ को विशेष मुद्रा में रख लेते हैं जिसमें तर्जनी और मध्यमा अंगुली का स्पर्श भ्रूमध्य से कराते हैं और अपनी अनामिका अंगुली और अंगूठे के माध्यम से बायीं और दायीं नासिकाओं को खोलते या बन्द करते हैं। पहले बायीं नासिका से श्वास लेकर उसको बन्द करते हैं और दायीं नासिका से श्वास छोड़ते हैं। फिर दायीं नासिका से ही श्वास लेते हैं और बायीं से छोड़ते हैं। यह एक चक्र हुआ। इस प्रकार दस से पन्द्रह चक्र का अभ्यास कर सकें तो इस कैप्सूल के लिये पर्याप्त है।

उसके बाद दूसरा प्राणायाम है भ्रामरी प्राणायाम जो मन को शांत करता है और प्राणों में संतुलन लाता है। इसमें अपनी अंगुलियों से कानों के छिद्रों को बन्द कर लेते हैं और श्वास छोड़ते समय कण्ठ से गुंजन की ध्वनि उत्पन्न कर उसे अपने मस्तिष्क में अनुभव करते हैं। इसका भी अभ्यास दस बार कर लीजिये, कुल पाँच से सात मिनट का समय लगेगा और यह आपका प्राणायाम का कैप्सूल हुआ, जिसका अभ्यास

आसनों के बाद कर सकते हैं और यदि समय का अभाव हो तो दिन के किसी अन्य समय भी कर सकते हैं, पर भोजन के तुरन्त बाद नहीं।

शिथिलीकरण – चौथा कैप्सूल शिथिलीकरण का है, जिसको करने का आदर्श समय शाम का है जब आप दिनभर अपने कार्यक्षेत्र में कार्य करने के बाद घर लौटते हैं। पुलिसवालों को वैसे भी कार्यक्षेत्र में अनेक तनावों का सामना करना पड़ता है। जब घर लौटते हैं तो दिनभर के तनावों को लेकर आते हैं, पारिवारिक जीवन में वे तनाव मिल जाते हैं और कई बार क्लेश और कलह का कारण बनते हैं। अपने कार्यक्षेत्र और पारिवारिक जीवन में संतुलन बनाये रखने के लिये यह वांछनीय है कि घर लौटने के बाद आप अपने आपको पूरी तरह रिलेक्स कीजिये, तनावमुक्त कीजिये।

इसके लिये एक बहुत सरल और उपयोगी विधि है योगनिद्रा, जिसका आविष्कार हमारे परम गुरुदेव, श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने किया था और आज यह पूरे विश्व में बहुत लोकप्रिय विधि हो गई है। इसका अभ्यास रिकॉर्डिंग के माध्यम से सरलतापूर्वक कर सकते हैं। बिस्तर या फर्श पर एक आरामदायक स्थिति में लेटकर निर्देशों को सुनते जाते हैं और उनका मानसिक रूप से अनुसरण करते जाते हैं। इस विधि में लगभग बीस मिनट समय लगता है और यह मनोमय कोष के तनावों को निष्कासित करने में बहुत प्रभावी साबित होती है। यदि हम योगनिद्रा के अभ्यास को अपने जीवन का अंग बना लें तो रोजमर्रे की अनेक सामान्य तनाव-जनित समस्याओं से हमें छुटकारा मिल जायेगा।

ध्यान – अन्तिम कैप्सूल ध्यान का है, जिसका अभ्यास रात को सोने से पहले कर सकें ताकि दिनभर की परिस्थितियों से मन में जो तनाव एकत्र हुआ है, उसे मन में न रहने दें। सामान्यत: होता यह है कि हम दिनभर की चीजों के बारे में चिंतन करते-करते सोते हैं। वे विचार मन के अवचेतन स्तर पर चलते रहते हैं और हमारी नींद की गुणवत्ता अच्छी नहीं रहती। सबेरे जगने पर मन और प्राणों का स्तर उन्नत नहीं रहता और यह एक दुष्चक्र बन जाता है। दिनभर हम ऊर्जा का अभाव अनुभव करते हैं, रात को नींद देर से आती है और जब यह आदत बन जाती है तो इससे छुटकारा पाना मुश्किल हो जाता है। यदि हम सोने से पहले अजपा-जप जैसा एक छोटा-सा ध्यान का अभ्यास कर सकें, जिसमें हम शरीर के एक विशेष भाग में श्वास को आते-जाते अनुभव करते हैं और उसके साथ श्वास का मंत्र सोहं जोड़ देते हैं, तो कालान्तर में हमारे

मन पर, मन के व्यवहारों पर, सजगता और समझ पर, हमारी अन्य मानसिक प्रतिभाओं पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

यौगिक जीवनशैली

योग का जीवनशैली पक्ष भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। योग की अलग-अलग विधियों का अभ्यास तो हमने दिन के अलग-अलग समय कर लिया, लेकिन साथ में यह भी देखना आवश्यक है कि दिन के अन्य समय जब हम अपना कार्य कर रहे हैं, लोगों से परस्पर व्यवहार हो रहा है, वहाँ भी हमारा दृष्टिकोण और मानसिकता कैसी रहती है। आखिर हमारा जीवन क्या है? जिसे हम अपने मन में जीते हैं वही हमारा जीवन है और मन चंगा तो कठौती में गंगा। मन को सदा एक उन्नत, सकारात्मक अवस्था में रखना ही यौगिक जीवन का प्रयोजन है।

हमारे गुरुदेव, स्वामी निरंजनानन्द जी ने हमलोगों के सामने एक लक्ष्य रखा है – क्या हम क्षण-प्रतिक्षण एक यौगिक मानसिकता को बनाये रख सकते हैं या नहीं। यौगिक मानसिकता है क्या? संक्षेप में कहें तो यह सकारात्मकता ही है। जीवन की कोई भी घटना या परिस्थिति हो, उसके हमेशा दो पक्ष रहते हैं, कोई चीज ऐसी नहीं जो पूरी तरह नकारात्मक हो। अब यह हमारी मानसिकता पर निर्भर करता है कि हम किस पक्ष पर ध्यान देते हैं। यदि हम नकारात्मक पक्ष पर स्वयं को केन्द्रित कर लेते हैं तो स्वाभाविक रूप से हमारे विचार, चिंतन और भावनाएँ एक नकारात्मक भँवर में पड़ जाती हैं। यदि हम योग को आत्मसात् करते हुये अपने जीवन के सकारात्मक पक्ष पर हमेशा जोर देते रहें तो पायेंगे कि जीवन का स्वरूप, जीवन का अनुभव बदलने लगता है।

सजगता और प्रसन्नता

यौगिक जीवनशैली के अन्तर्गत जो मुख्य चीज है वह है सजगता। अगर हम सजग नहीं रहेंगे तो हमें मालूम ही नहीं रहेगा कि इस समय हमारा मन, हमारी भावनाएँ किस दिशा में जा रही हैं। हम अपनी मानसिकता में एक सकारात्मक दिशा परिवर्तन भी नहीं कर पायेंगे। सजगता योग का आधार है। योग के सभी अभ्यासों में, चाहे वे आसन हों या प्राणायाम या योगनिद्रा या ध्यान, मुख्य रूप से इसी मानसिक प्रतिभा को जागृत किया जाता है। अपने शरीर, श्वास, मन, विचारों और भावनाओं के प्रति जब हम सजग रह पाते हैं तो फिर धीरे-धीरे उनका दिशान्तरण संभव हो पाता है।

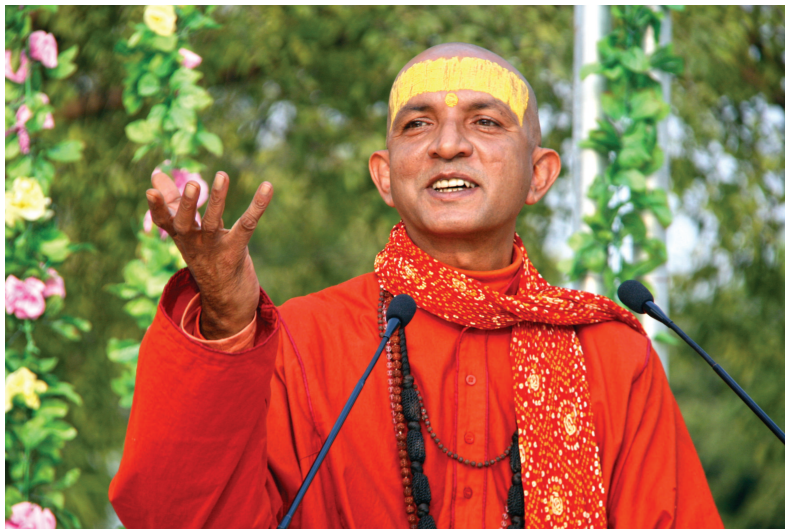

इस दिशान्तरण को गति मिलती है प्रसन्नता के अभ्यास से। स्वामी निरंजनानन्द जी ने हमलोगों के सामने एक चुनौती रखी है जिसे वे 'निरंजन चैलेंज' कहते हैं – क्या आप केवल एक दिन के 12 घंटे प्रसन्न रह सकते हैं या नहीं। आप अपने जीवन का अवलोकन करके स्वयं देखिये कि वास्तव में प्रसन्नता के क्षण कितने रहते हैं और तनाव, चिन्ता, दुःख, अवसाद एवं कुंठा के क्षण कितने होते हैं। आप पायेंगे कि अधिकांश समय अप्रसन्नता में ही बीतता है और यह कहीं बाहर से नहीं आई, बल्कि हमारे अन्दर से ही उत्पन्न हुई है। बाहर की परिस्थितियाँ जैसी हैं वैसी रहेंगी, हम उन्हें एक सीमित स्तर तक ही बदल सकते हैं, पर अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण को तो अवश्य बदल सकते हैं।

यदि हम ईमानदारी से अपने आपको देखें तो पायेंगे कि वास्तव में हम स्वयं अपने आपको दु:ख, परेशानी और अप्रसन्नता से जोड़ते हैं। हमलोग किसी पेड़ को जाकर पकड़ लें और चिल्लाएँ, 'बचाओ, बचाओ, पेड़ मुझे नहीं छोड़ रहा है' तो यह किसकी गलती होगी? पकड़ तो हमने रखा है पेड़ को और कह रहे हैं पेड़ हमें नहीं छोड़ रहा है। यही दृष्टांत हमारे जीवन में लागू होते रहता है। हम स्वयं दु:ख से सम्बन्ध जोड़ लेते हैं और उस संयोग को तोड़ने में योग हमारी मदद करता है। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा भी है – *तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्* – दु:ख से जो संयोग हमने कर लिया है उसका वियोग ही योग है। जिस चिन्ता, परेशानी और अप्रसन्नता रूपी पेड़

को हम पकड़े बैठे हैं, सजगतापूर्वक उससे विच्छेद कर लेना ही व्यावहारिक योग है जिसे हम क्षण-प्रतिक्षण कर सकते हैं।

आप आज से ही इसे एक साधना के रूप में जीवन में आजमाकर देखिये। दैनिक जीवन में अपने सहकर्मियों और परिवारवालों के साथ जो व्यवहार होता है, उसे सजगतापूर्वक देखें। आप अपने व्यवहार में स्वयं को सकारात्मकता और प्रसन्नता से जोड़ रहे हैं या नकारात्मकता और अप्रसन्नता से। ठीक है माना कि पहले दिन हम केवल पाँच मिनट प्रसन्न रह पाते हैं। यही हमारा लक्ष्य हो कि दिन में पाँच मिनट हम अपने आपको प्रसन्न रखेंगे चाहे बाह्य परिस्थिति कितनी प्रतिकूल क्यों न हो। प्रतिकूल परिस्थिति में भी प्रसन्न रह पाना एक सबल, स्वस्थ मन का लक्षण है। ऐसा ही मन हर व्यक्ति का होना चाहिये और विशेषकर पुलिसवालों का क्योंकि उन पर दायित्व अधिक है। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी समाज में कानून व्यवस्था को बनायें रख पाना, विपरीत परिस्थितियों में भी समझदारी, सजगता और ठण्ढे दिमाग से काम ले पाना, यह वास्तव में एक चुनौती है। तनाव और चिंता तो होती ही है और इसीलिये यौगिक कैप्सूल और जीवनशैली पुलिसवालों के लिये विशेष रूप से लाभदायक है। निरंजन चैलेंज को अपना कर देखिये। प्रसन्नता की पाँच मिनट की अवधि से शुरू कीजिये और उस अवधि को धीरे-धीरे बढ़ाते जाइये, पाँच से दस मिनट, दस से बीस मिनट और धीरे-धीरे यह आपके चरित्र और व्यवहार का अंग बनने लगेगा। यही यौगिक जीवन है जो अन्य लोगों को भी सकारात्मकता और अच्छाई की ओर प्रेरित कर सकेगा।

जो क्षण-प्रतिक्षण अपना सम्बन्ध सकारात्मकता और प्रसन्नता से जोड़े रख सके वह वास्तव में योगी है, क्योंकि वह योग को जी रहा है। अभ्यास तो करने की चीज हुई पर योग वास्तव में जीने की चीज है और इसी को हमारे गुरुदेव, स्वामी निरंजनानन्द जी ने बिहार योग विद्यालय के दूसरे अध्याय का लक्ष्य बनाया है। जीवन को यौगिक बनाना, जीवन में सकारात्मकता, प्रसन्नता और आशावादिता जैसे सद्गुणों को लाना, जीवन में अच्छाई से जुड़ना – यही हमारा संदेश है आप सबके लिये। स्वामीजी और बिहार योग विद्यालय की ओर से हम बिहार पुलिस के सभी बन्धुओं के प्रति अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ व्यक्त करते हैं और आशा करते हैं कि आप योग को अपने जीवन में अवश्य स्थान देंगे, अपने जीवन को योगमय, उन्नत एवं उत्कृष्ट बनाकर समाज की अधिकाधिक सेवा कर पायेंगे।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

राजयोग सब के लिए

अवलोकन और अभ्यास कैप्सूल

पृष्ठ 194, ISBN: 978-81-94932-88-8

यह पुस्तक राजयोग के विभिन्न पहलुओं जैसे उद्देश्यों, बाधाओं एवं जीवनशैली में सामंजस्य को उजागर करती है। विद्यार्थी, परिवार, वयोवृद्ध एवं अन्य वर्गों के लोग अपने दैनिक जीवन में राजयोग का समायोजन करने का व्यावहारिक निर्देश इस पुस्तक से प्राप्त कर सकते हैं। व्यसन, असुरक्षा का भाव एवं चिरकालीन थकान जैसी अवस्थाओं के प्रबन्धन हेतु राजयोग कैप्सूल का परामर्श दिया गया है।

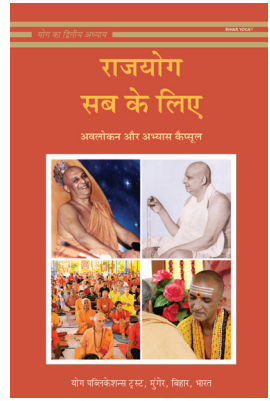

नया प्रकाशन

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net
बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद
बिहार योग परम्परा की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना
biharyoga.net तथा *satyamyogaprasad.net* पर स्वस्थ जीवन हेतु यौगिक जीवनशैली साधना उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/
योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

सभी ग्राहकों के लिए महत्त्वपूर्ण सूचना

आत्मस्वरूप

हरि: ॐ

हमें यह सुखद समाचार देते हुए हर्ष हो रहा है कि जनवरी 2021 से मासिक योगा (अंग्रेज़ी) तथा योगविद्या (हिन्दी) पत्रिकाएँ सभी ग्राहकों, सहयोगियों, योगप्रेमियों, भक्तों तथा आध्यात्मिक साधकों के लिए निम्नांकित वेबसाइटों पर नि:शुल्क उपलब्ध रहेंगी –

www.satyamyogaprasad.net

www.biharyoga.net

वर्तमान कोरोनावायरस महामारी और उससे उत्पन्न अनिश्चितता के कारण योगा और योगविद्या की प्रकाशित प्रतियाँ 2021 में ग्राहकों के लिए उपलब्ध नहीं रहेंगी। इसलिए 2021 में इन पत्रिकाओं के लिए नए सदस्यता आवेदन या पुरानी सदस्यता को बढ़ाने के आवेदन स्वीकार **नहीं** किए जा रहे हैं। अत: इन पत्रिकाओं के लिए सदस्यता आवेदन **मत** भेजिए।

पत्रिकाओं सम्बन्धी परिस्थिति की जानकारी आपको समय-समय पर मिलती रहेगी।

इस बीच श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती और श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की शिक्षाओं को ग्रहण कर उन्हें अपनी दिनचर्या में आत्मसात् एवं अभिव्यक्त कीजिये ताकि आपका जीवन उदात्त और उन्नत बन सके।

आपके स्वास्थ्य, कल्याण और शांति के लिए श्री स्वामी सत्यानन्द जी के आशीर्वाद सहित,

ॐ तत्सत्

सम्पादक